मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

मानवता के हत्यारे

"जिस इन्सान को रातों को जाग–जाग कर, ख़ून–ए–जिगर पिला–पिला कर पाला गया है, जिससे उसके माता–पिता ने, कुल परिवार ने आशाएं बांध रखी हैं, जो ख़ुदा की धरोहर लेकर दुनिया में आया है, जो दुनिया की मूल आत्मा है, उसको मारा जाता है। यह हत्यारे वह व्यक्ति हैं जिनके समक्ष मानवता का सत्य, मनुष्य का इतिहास, माता–पिता का प्रेम नहीं है। इस मनुष्य को बनाने के लिए शिक्षाकेन्द्र, बुद्धजीवियों, शिक्षकों और प्रशिक्षकों ने जो परिश्रम किया है, प्रयास किये हैं, वह उनके सामने नहीं। यदि यह तथ्य सामने होते तो दुनिया में कोई न हीं मिलता, जो उसको मारने के लिए तैयार हेाता, सिकन्दर व दारा, चंगेज़ व हलाकू, हिटलर व सीज़र जिन्होंने मानवता की खेती को आग लगाई, यह सब मनुष्य की वास्तविकता से अनजान थे, वह यह नहीं जानते थे कि मनुष्यक के विरुद्ध बिगाड़ पैदा करने वालों पर खुदा को कितना क्रोध आता होगा।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी

दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

SEP 19

₹ 10/-

क़ब्र यानि आलम-ए-बरज़ख़

"सईद बिन मुसैब (रज़ि०) से रिवायत है कि हज़रत आयशा (रज़ि०) ने कहा: या रसूलुल्लाह! आप (स०अ०) ने मुनकर व नकीर की आवाज़ और क़ब्र के दहाने का मुझसे ज़िक्र फ़रमाया, कोई चीज़ मुझको तसल्ली में नाफ़ेअ नहीं होती है। रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया: ऐ आयशा! मुनकर व नकीर की आवाज़ें मोमिनों के कानों में ऐसी होंगी जैसे सुरमा आंख में (लज़्ज़त बख़्श होता है) और क़ब्र का फ़िशार मोमिन के हक़ में ऐसा राहत बख़्श होगा कि जैसे कोई बेटा मादर-ए-मुशफ़िक़ा (माँ) से दरदे सर की शिकायत करे और वह उसके सर को नर्म-नर्म दबाए।"

सुन लिया आपने! मुनकर व नकीर की वह चीख़ व डांट जो बड़े मज़बूत दिल वालों को हिला कर रख दे और सबको हिला दे, वह मोमिनों के हक़ में ऐसी राहत बख़्श व लज़्ज़त बख़्श होगी, जैसे कोई आंख में सुरमा लगाकर ठंडक हासिल करता है और क़ब्र का वह फ़िशार खुदा दुश्मनों के हक़ में ऐसा होगा जैसे अंडे पर कोई भारी पत्थर गिराकर उसको चकनाचूर कर दे, वह मोमिन के हक़ में ऐसा होगा जैसे कोई शफ़ीक़ मां अपने प्यारे बेटे का सर प्यार व मुहब्बत से दबाती रहे।

क्या ख़ुदा न ख़्वास्ता आपको इस बयान में किसी मुबाल्गे, किसी तसन्नो व तकल्लुफ़, किसी शायरी का एहतमाल है? जिस आलम-ए-क़ब्र को आप इस दर्जा मुहीब व दहशतनाक समझते थे और जिस आलम-ए-बरज़ख़ के नाम से पहले आपके रोंगटे खड़े होते थे, उसका इस दर्जे तशफ़्फ़ी बख़्श आपने सादिक़ व मस्दूक़ रसूल-ए-मक़बूल (स०अ०) की ज़बान से सुन लिया या नहीं? अब भी वह कोई चीज़ वहशत व दहशत की किसी दर्जे में किसी मोमिन के लिए बाक़ी रह गई है? या उल्टी वह मकान-ए-राहत व सामान-ए-मसर्रत व सामान-ए-ऐश हर ईमान वाले के हक़ में बन गई।

"हज़रत अबू सईद खुदरी सहाबी (रज़ि०) से रिवायत है रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया कि जब मोमिन बन्दे को दफ़न किया जाता है, तो क़ब्र उससे कहती है; ख़ूब आए तुम, बहुत ख़ूब आए तुम, तुम तो मुझे महबूब तर ही थे जो मेरी सतह पर चलते थे, तो आज मैं तेरी कार पर दाज़ बना दी गई हूं और तुम मेरे पास आए हो, तो देखना अपने साथ मेरा मामला, फिर हद्दे नज़र तक क़ब्र उस बन्दे पर फ़राख़ हो जाती है और उसका दरवाज़ा जन्नत की तरफ़ खोल दिया जाता है। और रसूलुल्लाह (स०अ०) ने यह भी फ़रमाया कि क़ब्र या तो एक बाग़ हो जाती है, जन्नत के बाग़ों में से, या ख़न्दक़ हो जाती है, दोज़ख़ की ख़न्दक़ों में से।"

फ़रमाइये! अब यह वहम मिटा या नहीं कि क़ब्र तो एक तंग व तारीक गढ़ा होती है, जिसमें लाकर मैय्यत को डाल दिया जाता है और सैंकड़ों मन मिट्टी के नीचे उसे दबा दिया जाता है। क़ब्र तो मोमिन के हक़ में कैसा ख़ुशगवार, कितना आरामदेह और किस दर्जा वसीअ व फ़राख़ दिल बहलाव व गहवारा निकला। और रसूलुल्लाह (स०अ०) ने जब साफ़ फ़रमा दिया कि मोमिन के हक़ तो वह जन्नत के बाग़ का एक टुकड़ा हो जाता है और अब वाहिमा की गुंजाइश ही कहां बाक़ी रह गयी कि क़ब्र तो लाज़मी तौर पर एक तंग व तारीक क़ैदख़ाना ही है।

अफ़सोस है कि कोई मुहम्मद (स०अ०) का नामलेवा कश्मीर व स्विटज़रलैंड घूमने के ख़्याली पुलाव बार-बार पकाता है और ऐसे दिलकश व लाज़वाल, सदाबहार और बेख़ज़ा बाग़ीचे की तमन्ना एक बार भी न करे।

हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:९ सितम्बर २०१९ ई० वर्ष:११

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

एक मर्द–ए–खुदा की वसीयत.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

स्वार्थ तथा दुर्व्यवहार.....३
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मुस्लिम समाज की तीन बुनियादी ख़राबियां.....५
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

सच्चाई क्या है?.....७
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ईमान व आमाल का वास्तविक स्तर.....९
अब्दुस्सुब्हान नाखुदा नदवी

मुहर्रम की बिदआत.....११
प्रस्तुति- शिबली - अक्सा

रसूलुल्लाह स०अ० की संतान.....१३

फ़िरऔन की लाश (रिसर्च).....१५
डॉक्टर मोरिस बुकाय

रसूलुल्लाह (स०अ०) का मुल्क–ए–शाम का दूसरा सफ़र.१७
मुहम्मद अरमुग़ान नदवी

क्लीसा का शासन.....१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

सम्पादकीय

एक मर्द–ए–ख़ुदा की वसीयत

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

"इस उम्मत के आख़िरी लोगों की इस्लाह (सुधार) उसी चीज़ से होगी जिससे उम्मत के जिससे उम्मत के सबसे शुरूआती लोगों की हुई थी।"

यह उम्मत के सुधार का वह नुस्ख़ा है जिसका इस्लाम के साढ़े चौदह सौ साल के इतिहास में बार–बार अनुभव किया गया है और हर बार इसके सफल परिणाम सामने आए हैं। कहीं बड़े स्तर पर कहीं छोड़े स्तर पर, आज मुसलमानों के पतन के विभिन्न कारण खोजे जाते हैं मगर बहुत कम लोग इस वास्तविकता तक पहुंचते हैं कि मुसलमानों के पतन का सबसे बड़ा कारण ईमान व अख़लाक़ का दीवालियापन है। हज़रात–ए–सहाबा (रज़ि0) को दुनिया में जो भी स्थान मिला, वह ईमान व अख़लाक़ से मिला। यह वह मज़बूत और ठोस बुनियादें हैं कि उन पर गगनचुम्बी इमारतें निर्मित की जा सकती हैं।

मक्का मुकर्रमा में जब सफ़ा नामक पहाड़ी से रसूलुल्लाह (स0अ0) ने तौहीद (एकेश्वरवाद) की दावत दी तो कुछ लोग ईमान लाए किन्तु वह सच्चा ईमान रखने वाले लोग थे। उनके अख़लाक़ का स्तर बहुत ऊंचा था, जिसके कारण एक बड़ी संख्या इस्लाम में दाख़िल हुई तथा इसी ईमान व अख़लाक़ की बुलन्दी ने दुनिया की सत्ता उनके हाथ में दी और इसी ईमान व अख़लाक़ की बुनियादों पर इल्मी तरक़्क़ियां हुईं और वह दुनिया पर छा गए।

अफ़सोस की बात यह है कि आज मुसलमानों ने उन बुनियादों को भुला दिया है। वह रेत पर गगनचुम्बी इमारतें बनाना चाहते हैं। हर सतह पर जो तनाव तथा अराजकता नज़र आती है उसका सबसे बड़ा कारण ईमान व अख़लाक़ की ज़बरदस्त कमी है। इस समय सबसे अधिक इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है तथा यही ईमान व अख़लाक़ की ताक़त है जो दूसरों को प्रभावित करती है। यह दावत का अमली और सबसे सफल रूप है। ईमान की गहराइयों के साथ जब इस्लामी अख़लाक़ दुनिया के सामने आएं तो कितना भी सख़्त दिल इन्सान हो, वह प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। इस समय सबसे ज़्यादा कमी इन्हीं अख़लाक़ की है। हम अपनी–अपनी मस्जिदों और मदरसों में लगे रहें लेकिन अपने अख़लाक़ को ठीक न करें और इस्लाम का यह पहलू जिससे इस्लाम की सही तस्वीर सामने आ सकती है, लोगों के सामने न आए तो यह बहुत ही ख़तरनाक बात है और आज मुसलमानों के पतन का यह बहुत बड़ा कारण है।

हमारे एक अत्यधिक शुभचिन्तक भाई अब्दुर्रशीद साहब हैदराबादी जो आधी सदी से हरमैन शरीफ़ैन (मस्जिद–ए–हरम व मस्जिद–ए–नबवी) की सेवा में व्यस्त हैं। तब्लीग़ी जमाअत से पुराना संबंध रखते हैं। इस बार मुलाक़ात के अवसर पर उन्होंने एक अजीब घटना की चर्चा की, जब वह कई साल पहले जमाअत में उज़्बेकिस्तान गए थे, तो वहां एक बुज़ुर्ग से उनका परिचय कराया गया। उस समय उनकी उम्र अस्सी बरस के पार थी। उन्होंने जमाअत वालों को सम्बोधित करते हुए कहा: एक समय था कि जब यह इलाक़ा मुसलमानों का इल्मी व रूहानी केन्द्र समझा जाता था। इमाम बुख़ारी व तिरमिज़ी यहीं पैदा हुए। बड़े–बड़े शेख़ पैदा हुए। यहां का साधारण व्यक्ति कहीं और जाता तो उसे इमाम बनाया जाता, किन्तु फिर पूंजीवादी क्रान्ति आयी। वह कहने लगे मुझे याद है चौराहे पर हमारी बीवियों–बच्चियों को एकत्र किया गया और उनको आदेश दिया गया कि वह बुर्क़ा उतार कर अपने हाथ से उनमें आग लगाएं, वरना उनको आग में डाल दिया जाएगा। मेरी पत्नी तैयार न हुई और थोड़ी ही देर में उसे आग में डाल दिया गया। मैंने बच्चियों से कहा कि बुर्क़ा उतार कर आग लगा दो और घरों में चली जाओ। वह शरीफ़ बच्चियां बुर्क़ा उतार कर घरों में गईं तो उनके जनाज़े ही बाहर निकले। वह बुज़ुर्ग बोले; जानते हैं हालात क्यों ख़राब हुए? इसका कारण केवल यह था कि हमने यहां की ग़ैरमुस्लिम आबादी को नज़रअंदाज़ कर दिया। हमने उनमें काम नहीं किया। फिर उन्होंने कहा कि तुम हिन्दुस्तान जाकर मेरी वसीयत पहुंचा देना कि अभी मुसलमानों को मौक़ा है वह इससे फ़ायदा उठाएं। दूसरों के सामने इस्लामी अख़लाक़ का नमूना पेश करें और उनमें काम करें, वरना अल्लाह न करे हिन्दुस्तान में भी वहीं हालात न पैदा हो जाएं जो यहां उज़्बेकिस्तान में हैं।

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0) ने बर्मा के मुसलमानों को........................(शेष पेज 20 पर)

स्वार्थ तथा दुर्व्यवहार

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

अनोखी सभा:

दोस्तो और भाइयो! ज़माने की एक रीत है, वह एक लकीर सी बन गई है। उससे हटकर कोई कुछ करे या कहे तो आश्चर्य होता है। हम इस ज़माने के रीति–रिवाज के ख़िलाफ़ आपके शहर में आए तथा आम नियमों से हटकर यह सभा कर रहे हैं। इसका न कोई अध्यक्ष है, न कोई आन्दोलन, न कोई उपाय, परिचय का भाषण भी हमारे नियमों के ख़िलाफ़ हुआ। हमारे प्रिय साथी ने हमारे प्रेम में हमारे संबंध में बहुत कुछ कहा। हमारे मुंह पर हमारी तारीफ़ कुछ खिलती नहीं। यह वाक़्या है, साथ ही हमें उनकी मुहब्बत का स्वीकार्य भी है। हम आपके पास उपस्थित हुए, हमारे साथ हमारे सत्तर–अस्सी साथी और हैं। हमने कोई कमाल की बात नहीं की। स्वयं हमारे इस देश में तथा इस देश से बाहर लोगों ने तन, मन, धन से मानवता की सेवा की है। हमें मानवता के उन शुभचिन्तकों की सेवाओं को देखकर शर्म आती है, जिन्होंने भीतर–भीतर बिना किसी सभा या कमेटी के मानवता की ठोस सेवा की। खुदा भला करे यूरोप का कि अब सभा या कमेटी अध्यक्ष तथा पहचान के बिना समझ में नहीं आता कि कोई काम किया जा सकता है। हमने क्या किया। हम यहां केवल अल्लाह की तौफ़ीक़ से आए हैं और मालिक की दी हुई ज़बान से हम बोल रहे हैं।

मुझे आपसे निःसंकोच बात करनी है। मुझे यह भी अच्छा नहीं लगता कि यह माइक्रोफ़ोन हमारे–आपके बीच में बाधा बने और इसका एहसान लिया जाए, मगर मजबूरी है। मैं ऊपर बैठ गया हूं ताकि अपने भाइयों को अच्छी तरह से देख सकूं, वरना इस समय जो कहूंगा घर की सी बात होगी। आप इसे घर की ही महफ़िल समझिए।

सबके सब बिगड़े हुए हैं:

भाइयो! मुझे आपसे जिस समस्या पर बात करनी है वह हमारे–आपके लिए एकसमान है। समस्याएं बहुत हैं। एक–एक समस्या को अलग–अलग रखकर सोंचे तो बहुत देर लगेगी और बात बहुत दूर चली जाएगी। यह जीवन की बड़ी दर्दनाक घटना है कि यहां सबके सब ही बिगड़े हुए हैं। इस ख़राबी की जड़ क्या है, उस पर हाथ रखना है।

आप नगरपालिका के वाटर वर्क्स (जलनिगम) की व्यवस्था से परिचित हैं। अगर नलों से ख़राब पानी आने लगे जो पेट को ख़राब करे, उसमें बीमारियों के कीटाणु हों, तो एक उपाय तो यह है कि हर व्यक्ति अपने–अपने घर के नल में कपड़ा बांध ले, पानी छान कर या उबाल कर पिये। लेकिन होशियारी यह है कि वाटर वर्क्स को साफ़ और ठीक करने की चिन्ता की जाए। शहर के प्रशासन से निवेदन किया जाए कि वह उसे ठीक करे। हम तो कपड़ा बांधकर या छान कर पी लेंगे लेकिन बहुत से अनजान प्यासे होते हैं जो मुंह लगा देते हैं? उनकी सुरक्षा का क्या उपाय है? आप ही सोचिए कि कौन सा तरीक़ा ठीक है?

आज मानवता का वाटरवर्क्स ख़राब हो गया है। जीवन के पॉवर हाउस में ख़राबी आ गई है, जहां से सारे शहर को बिजली बांटी जाती है। मानवता घुलती–पिघलती जा रही है। कालाबाज़ारी, रिश्वतख़ोरी, धोखाधड़ी आम हो गई है। आज का इन्सान इन सब गड़बड़ियों में शामिल है। आज के चिन्ता करने वाले मनुष्य इन परिणामों पर झुंझला रहे हैं, लेकिन गुस्सा किस पर उतारा जाए और उसका ज़िम्मेदार किसको समझा जाए?

अस्ल मुजरिम कौन है?

आप तो इन्सान हैं, जानवर भी इस हक़ीक़त को समझते हैं कि उनका दुश्मन कौन है। कुत्ता भी मारने वाले हाथ पर दौड़ पड़ता है, ढेले से नहीं उलझता। गधे

की बेवकूफ़ी हर जगह मशहूर है, उसे ढेला मारिये तो वह मारने वाले ही के पीछे गुस्से से दौड़ पड़ता है। वह समझता है ख़राबी तथा मुसीबत की जड़ कहां है। हम–आप जानवरों से गए–गुज़रे हैं। शीशे के महल में रहते हैं चारों तरफ़ से ढेले पड़ रहे हैं। एक हाथ है, जो ढेले मार रहा है, वह हाथ हमें दिखाई नहीं दे रहा है, ढेले पर गुस्सा उतार रहे हैं। वह हाथ संतुष्ट है कि नज़र से ओझल हैं और दिल खोलकर ढेले मार रहा है। बड़े–बड़े लाल बुझक्कड़ ढेलों में उलझे हुए हैं। मानवता के सुधार के चिन्तन में आम चिन्तकों का यही हाल है। हर एक के सोचने का तरीक़ा होता है।

पैग़म्बरों (संदेष्टाओं) के सोचने का तरीक़ा:

हमारे सोचने का तरीक़ा पैग़म्बरों का तरीक़ा है। हम पूरे सोच–विचार तथा काफ़ी अनुभव के बाद पूरी तरह से संतुष्ट हो गए हैं कि पैग़म्बर सिसकती हुई मानवता की समस्याओं को जिस प्रकार हल करते हैं, वही सही तरीक़ा है। जब उस स्वरूप पर, उस आधार पर काम हुआ, इन्सानियत के दिल की फांस चुन–चुन कर निकल गईं, आंखों की सुइयां अपने आप बाहर हो गईं, ऐसी मुहब्बत का ज़माना आया कि हर ओर चैन व सुकून हो गया। कुरआन कहता है कि हर देश व हर क़ौम में ख़ुदा का रास्ता बतलाने वाले आए। उनकी शिक्षाओं पर ज़माने के पर्दे पड़ गए। कुछ हमें ज्ञान का घमण्ड भी हो गया और हम पढ़–लिख भी गए इसलिए हमें हज़ार बरस पहले के उपाय आउट ऑफ़ डेट लगते हैं, और उन उपायों पर कार्य करना हमारे लिए आर सा बन गया है। लेकिन हक़ीक़त यही है कि सूरज सबसे पुराना है। नई रोशनी वाले पुराने सूरज से आंखे नहीं बन्द कर सकते। हमने पैग़म्बरों का तरीक़ा अपनाया। हमने मानवता के सुधार का उपाय उनसे सीखा।

स्वार्थ तथा दुर्व्यवहार का मानसून:

वह कहते हैं कि हर चीज़ का एक तत्व होता है। यदि किसी चीज़ का सिलसिला कोई बन्द करना चाहे तथा उसके परिणाम से बचना चाहे तो उसको कोशिश करनी चाहिए कि वह तत्व ही न पैदा होने पाए। आपको एक साधारण उदाहरण दूं, गर्मियों में समुद्र में वाष्प (Vapours) पैदी होती है, वह भाप उठती हैं, गर्मी में वह तहलील होती हैं, पहाड़ों से टकराती हैं और मूसलाधार बारिश बनकर बरसती हैं। हम मानसून को चादर या तम्बू से नहीं रोक सकते। आज दुनिया पर दुर्व्यवहार का मानसून छाया हुआ है। यह ज़रगरी का मानसून है, यह स्वार्थ का मानसून है, इच्छापूर्ति, ऐश्वर्य तथा हवस का मानसून है, दिल के समुद्र से स्वार्थ रूपी भाप तथा इच्छापूर्ति का शौक़ जब हद से बढ़ जाएगा, ऐश्वर्य उसे घुलाएगा, तो स्वार्थ का मानसून बरसेगा, जा चादरों से रोका नहीं जा सकता।

इसका इलाज:

दिल के मानसून को रोकने के लिए अल्लाह का यक़ीन, मरने के बाद अपने कर्मों की जवाबदेही का विश्वास तथा बदले का यक़ीन ज़रूरी है। एक ऐसा व्यक्ति जो उन बुनियादों को नहीं मानता। अपने पैदा करने वाले, रोज़ी देने वाले ख़ालिक़ (दाता) को नहीं पहचानता, वह दुनिया की सत्ता प्राप्त करके उससे लाभान्वित क्यों न हो? वह कमज़ोरों का ध्यान क्यों रखे? वह जानता है कि कोशिशों से उसे एक मौक़ा मिला है, वह कहता है, ज़िन्दगी के सारे मज़े ले लो। जो लोग किसी न किसी तरह अपनी चालाकी और होशियारी से ऊपर आ गए, वह क्यों किसी की बालादस्ती मानें? क्यों किसी के क़ानून का सम्मान करें? और आज का ऐश कल पर क्यों छोड़ दें? अगर मुझे भी मालूम हो कि मरने के बाद कोई ज़िन्दगी नहीं और ले–देकर यही ज़िन्दगी है तो फिर इस दुनिया का ऐश किस दिन के लिए छोड़ रखूं? अरब का एक नवयुवक शायर बड़ा महत्वाकांक्षी तथा सत्यवादी था। वह कहता था, दो क़ब्रों के ढेर बराबर हैं। अच्छा वह रहा जो ख़ूब ऐश करके गया और बड़ा नामुराद है वह व्यक्ति जो तकलीफ़ें उठाता रहा, जब मरने के बाद दोनों को ख़ाक में होना है और दोनों का अंजाम एक है तो मैं क्यों अपनी इच्छाओं का ख़ून करूं और किस लिए त्याग करूं। जितना चाहूं जीवन का आनन्द लूं, मेरा अधिकार है।

दोस्तो! एक पुराने शायर का, जो ख़ुदा तथा परलोक पर विश्वास न करता था, जीवन का सिद्धान्त है तथा आज हमारे प्रगतिशील युग का भी यही सिद्धान्त है तथा शिक्षा भी यही है कि: "खाओ, पियो, तथा मस्त रहो।" जब जीवन का यह नज़रिया बन जाए तो उससे ऐसे ही चरित्र का निर्माण होगा जिसे हम देख रहे हैं।

मुस्लिम समाज की तीन बुनियादी ख़राबियां

मौलाना सैय्यद अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

इस्लाम की बहुत सी बुनियादी चीज़ें ऐसी हैं, जिनका विभिन्न मुस्लिम क्षेत्रों में जाएज़ा लेने के बाद यह एहसास होता है कि अब मुसलमानों में वह चीज़ें बहुत कमज़ोर होती जा रही हैं, जबकि दीन–ए–इस्लाम में उनकी हैसियत रीढ़ की हड्डी जैसी है। दीन का जो ढांचा अल्लाह के रसूल (स0अ0) ने हमें दिया है, वह चीज़ें उसकी रीढ़ की हड्डी हैं। लेकिन अफ़सोस की बात है कि मुसलमानों का उनकी ओर ध्यान न देना आम होता जा रहा है, और यही वजह है कि आज देखने में दीन का काम बढ़ रहा है लेकिन वास्तव में घट रहा है। अगर जाएज़ा लिया जाए तो पता चलेगा कि हमने दीन का हुलिया बिगाड़ दिया है और दीन को सही तौर पर समझा ही नहीं है। जिसके नतीजे में दीन का जो असर हमारे पड़ोसियों पर पड़ जाना चाहिए, उसका कहीं नाम व निशान नहीं है। बस यह हाल है कि न अन्दर की हालत पूछने लायक़ है और न बाहर की।

दीन की जो अहम चीज़ें हमारे समाज से ओझल होती चली जा रही हैं, उनमें बुनियादी चीज़ें निम्नलिखित में देखिएः दीन–ए–इस्लाम में तौहीद का अक़ीदा (एकेश्वरवाद की आस्था) बिल्कुल बुनियादी चीज़ है। लेकिन तौहीद के अक़ीदे को लोगों ने बहुत आसान समझ लिया है और वह इस धोखे में हैं कि हम तो मोमिन हैं, हमको अक़ीदे की क्या ज़रूरत है? अस्ल में यह बहुत बड़ा धोखा है, हर वक़्त हर व्यक्ति को अपने ईमान और अपने अक़ीदे की फ़िक्र होनी चाहिए, इसलिए कि यह बात तो सबलोग जानते ही हैं कि अगर किसी के पास सोना हो, और उसने उसे अपने घर में किसी जगह रखा हो, तो वह बराबर चेक करता रहता है कि सोना सुरक्षित है या नहीं? बल्कि बहुत से एहतियात पसंद लोग तो अपना क़ीमती सामान बैंक के लॉकर में रखवा देते हैं और चेक भी करते रहते हैं कि ठीक से रखा है या नहीं?इसलिए कि दुनिया में जिस तरह सोने का बहुत महत्व है, उससे कहीं ज़्यादा दीन में तौहीद के अक़ीद का महत्व है। लेकिन आज हमारे दिलों में ईमान व अक़ीदे की अहमियत नहीं है, इसलिए कि हमें पुश्तैनी तौर पर यह दौलत मिल गयी है, लिहाज़ा इस बारे में किसी को चिन्ता नहीं कि उसके पास तौहीद का अक़ीदा बाक़ी है या नहीं?इसलिए कि यह भी हक़ीक़त है कि आजकल ईमान और अक़ीदे के चोर और डाकू बहुत हैं।

वर्तमान समय में ईमान व अक़ीदे के ऐसे डाकू और चोर हैं कि अगर आपने ईमान की ज़रा सी हिफ़ाज़त करनी छोड़ दी तो आपकी यह क़ीमती दौलत लुट जाएगी और उस क़ीमती माल की जगह भेष बदल कर कुछ और आपके पास आ जाएगा इसलिए कि आजकल जो चोर और ठग हैं वह नए–नए अंदाज़ से आते हैं। अतः यह संभव नहीं है कि आप उनका सामना भी कर सकें। एक साहब ने एक इलाक़े का हाल बताया कि वहां कोई बाबा आ गए, और उन्होंने कहा कि जिसके औलाद न होती हो वह फ़ौरन मेरे पास आ जाए और औलाद की दौलत से मालामाल हो जाए। ज़ाहिर है कि आजकल अक़ीदा सब ही का कमज़ोर है। इसीलिए यहां भी वही हुआ और सब लोग उसके पास भागे चले गए और फिर उसने सबको क़ाएदे से ठगा। लोगों से रुपए ऐंठ लिए, फिर वहां पन्द्रह–बीस दिन ठहरा और किसी को कुछ दे गया और किसी को कुछ दे गया और किसी से कह गया कि छः महीने में फ़ायदा होगा और लाखों रुपये लेकर फ़रार हो गया। अब ज़ाहिर है कि अगर वहां के मुसलमानों का अक़ीदा मज़बूत होता तो ऐसी लूट से बच जाते, इसलिए कि औलाद का होना या न होना अल्लाह के हाथ में है।

आज हर एक का अक़ीदा अन्दर से कमज़ोर हो गया है। इसीलिए सब इधर–उधर भागे चले जा रहे हैं। अगर हमारा अक़ीदा मज़बूत होता तो लोग कहीं न जाते, बल्कि अपने रब के सामने हाथ फैलाकर दुआ करते और काम बन जाता। लेकिन चूंकि अक़ीदा कमज़ोर है, इस वजह से हम भागे–भागे फिरते हैं। और ज़ाहिर सी बात है कि जब हमारा अक़ीदा–ए–तौहीद कमज़ोर हो गया तो हमारे यहां मुश्रिकों वाले काम, मुश्रिकों वाली बातें और उनकी सोच दाख़िल हो जाएगी। अगर हम मुस्लिम समाज को देखें तो हमें नज़र आएगा कि कोई मुश्रिकों वाली बात कह रहा है, कोई उनके जैसा काम कर रहा है, कोई उनके जैसी सोच में पड़ा हुआ है।

मुश्रिक (बहुदेववादी) के बारे में कुरआन मजीद में

साफ़ ऐलान है कि: "बेशक अल्लाह इसको माफ़ नहीं करता कि उसके साथ शिर्क किया जाए और उसके अलावा जिसको चाहता है माफ़ कर देता है।"

पता चला कि यह ऐसा गुनाह है कि इसमें यह बात बिल्कुल नहीं चलेगी कि फ़लां ने मुझे समझा दिया था या मुझे बिल्कुल ख़्याल नहीं रहा था। अल्लाह साफ़ कहेगा कि हमें पहले अपना अक़ीदा दिखाओ, सही है कि नहीं? अब अगर आप सोचें कि कह देंगे फ़लां बुज़ुर्ग आए थे और ऐसा–ऐसा बता रहे थे, अतः मैंने उनकी बात मान ली थी। ज़ाहिर है कि ऐसी बातों पर यही कहा जाएगा कि हमने तुमको अक़्ल सिर्फ़ दाल–चावल खाने को दी थी? तुमने हमारी बातों को गंभीरता से क्यों नहीं लिया?हमने साफ़ कह दिया था कि हम मुश्रिक को माफ़ नहीं करेंगे, सारे इन्सानो! सुन लो, हम सारे गुनाह माफ़ कर देंगे, लेकिन शिर्क माफ़ नहीं करेंगे। इस साफ़ ऐलान के बाद भी अगर आप कहेंगे कि मैं नहीं जानता था तो क्या कहा जाएगा कि तेरे घर में क़ुरआन रखा रहता था, तूने कभी क्यों नहीं पढ़ा। वहां कोई भी वजह काम न आएगी। इसलिए ख़ूब समझ लें कि कभी किसी के कहने–सुनने में नहीं आना है। तौहीद के अक़ीदे का सौदा किसी सूरत में गवारा नहीं करना है। चाहे तुम्हारे पास कोई कितना ही बड़ा बुज़ुर्ग चल कर आए, कितना ही बड़ा शेख़ बन कर आए कितना ही बड़ा आलिम बनकर आए।

शिर्क के बारे में रसूलुल्लाह (स0अ0) का ऐलान है: "मेरी शफ़ाअत का हक़दार वही शख़्स है, जो अल्लाह तआला के साथ ज़रा सा भी शिर्क न करता हो।"

रसूलुल्लाह (स0अ0) और क़ुरआन मजीद के साफ़ ऐलान के बाद बहाने बनाने का हर दरवाज़ा बन्द हो गया है। हदीस में साफ़ कह दिया गया है कि उसी की सिफ़ारिश करूंगा जो शिर्क न करे। इससे पता चला कि मुश्रिक को रसूलुल्लाह (स0अ0) की सिफ़ारिश भी नसीब नहीं होगी, चाहे वह मामूली दर्जे का मुश्रिक हो। इसलिए हमको शिर्क से बचने की बहुत ज़रूरत है। मुश्रिक के अच्छे काम भी क़ुबूल न होने की मिसाल ऐसे ही है, जैसा कि हममें से किसी व्यक्ति का खाता बैंक में न हो तो वह बैंक में रक़म जमा नहीं कर सकता, ठीक उसी और ज़रा सा भी उसके अन्दर शिर्क पाया जाता है तो वह चाहे कितने ही अच्छे काम करे, उसको कोई फ़ायदा नहीं मिलेगा।

दूसरी चीज़ जो मुस्लिम समाज में बहुत कमज़ोर हो चुकी है वह है इख़्लास (नेक नियत) की कमी। आज हमारे यहां से इख़्लास भी ख़त्म होता जा रहा है। आज हमारी यह हालत है कि हम जो भी काम करते हैं, उसको या तो बुरी नियत से करते हैं या बेनियत होते हैं। कोई भलाई का काम है जो हम बहुत अच्छे तरीक़े से कर रहे हैं, लेनिक होता यह है कि उसमें नियत ही नहीं होती। जबकि हदीस से मालूम होता है कि जो काम बिना नियत के हो वह क़ुबूल नहीं। इसलिए कि अल्लाह के यहां ख़ालिस काम क़ुबूल होता है, यानि मिलावट नहीं चलती और हम लोग यह समझते हैं कि जैसे यहां मिलावट करके हमारा काम चल जाएगा, ख़ुदा के यहां भी मिलावट चल जाएगी, ऐसा नहीं है। जब आप दुनिया में मशीनों से पता कर लेते हैं कि दूध में कितना दूध है और कितना पानी है, तो अल्लाह तआला से क्या चीज़ छिपी रह सकती है। उसकी मशीनें पूरी कायनात में लगी हुईं हैं। जो कुछ दुनिया में हो रहा है वहां सबकुछ रिकार्ड हो रहा है और चेक भी हो रहा है कि किसका काम कितना ख़ालिस है और कितनी मिलावट वाला है। यही वजह है कि आज कामों में असर ख़त्म होता जा रहा है और ऐसा लगता है कि अब भलाई के कामों में असर नहीं रहा। इसलिए कि वाक़्या यह है कि अल्लाह तआला के लिए काम ही नहीं हो रहा है, बल्कि हम सब लोग अपने लिए काम कर रहे हैं।

तीसरी चीज़ जो बहुत कमज़ोर हो चुकी है, वह है ख़िदमत का जज़्बा अर्थात सेवा भाव। इस समय मुसलमानों में यह जज़्बा भी ख़त्म हो गया है। यहां तक कि हमारे दीनदार वर्ग से भी यह जज़्बा रुख़्सत हो चुका है। ज़ाहिर है कि जब दीनदार तबक़े का हाल यह है तो बददीन तबक़े का हाल यक़ीनन और बुरा होगा। आज हमारे दीनदार तबक़े वाले जो बड़े–बड़े अफ़सर हैं, उनके बेटे जो बड़े–बड़े डिग्री होल्डर हैं और बाहर कमा रहे हैं, और वहां इत्मिनान के साथ रह रहे हैं। उनके पिता यहां राज़ी हैं और वे वहां ख़ुश हैं कि हम यहां हैं। बेचारे दो बूढे मां–बाप यहां पड़े हुए हैं। सिर्फ़ इसलिए कि ज़्यादा कमाएं इसीलिए माता–पिता की सेवा को ताक़ पर रख दिया है, जबकि मालूम होना चाहिए कि ख़िदमत से जन्नत मिलती है। कहा गया है कि जब मां–बाप बूढ़े हो जाएं तो उनको उफ़ भी न कहो, लेकिन यहां हाल बिल्कुल उल्टा है।

क्रमवार:

सच्चाई क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

"सिद्क़" सच्चाई को कहते हैं। उर्दू में इसका इस्तेमाल किसी हद तक सीमित अर्थों के लिए होता है और अरबी में जो "सिद्क" का इस्तेमाल है, इसमें बड़ा फैलाव है। इसमें कथन की सच्चाई है, अमल की सच्चाई और फिर अन्दर व बाहर की समानता, यह सारी बातें शामिल हैं। इसलिए कि जो "किज़्ब" है यानि झूठ, वह बिल्कुल इसका विलोम है और इसमें भी वही फैलाव है जो अरबी के अन्दर "सिद्क़" में है। झूठ जो आदमी अपनी ज़बान से बोलता है वह भी झूठ है और जो कर्म से प्रदर्शित करता है, वह भी झूठ ही की एक क़िस्म है। इसीलिए एक हदीस में यह बात फ़रमाई गयी है कि आदमी अगर किसी ऐसी चीज़ का प्रदर्शन कर रहा है जो उसके अन्दर नहीं है, वह ऐसा लिबास पहनता है जो कि केवल एक दिखावा है और हक़ीक़त से ख़ाली है, हदीस शरीफ़ में इसको "झूठ का लिबास पहनने वाला" कहा गया है। जैसे कोई झूठा पहनावा पहने, ऊपर भी झूठा लिबास और नीचे भी झूठा लिबास। कुर्ता भी झूठा और ईज़ार (पैजामा) भी झूठा यानि सर से पांव तक झूठ ही झूठ। इसी तरह सच्चाई है, इसमें भी दर्जे हैं, एक ज़बान की सच्चाई है और एक अमल की सच्चाई है और एक सच्चाई ऐसी है जो अन्दर से फूटती है।

सिद्क मुजस्समः

हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को जब सम्बोधित किया गया तोः "यूसुफ़, ऐ सच्चे इन्सान" कहा है। जब उनसे उनके क़ैद के दो साथियों ने ख़ाब की ताबीर पूछी थी। हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने उनमें से एक से कहा था कि जब तुम बादशाह के पास ख़ादिम बनो तो मुझे याद रखना और मेरा तज़किरा करना, मगर वह भूल गया। फिर बादशाह ने एक ख़ाब देखा जिसकी ताबीर उसके समझ में नहीं आयी और उसके आस–पास जो उसके क़रीब रहने वाले दरबारी थे, वह भी नहीं समझ सके। उसी वक़्त उस साथी को याद आया कि यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) ने हमारे ख़ाब की ताबीर हमको बतायी थी। इस वक़्त हमें उनसे रुजूअ करना चाहिए। फिर वह हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) के पास आया था और उस वक़्त जो ख़िताब किया था तो उसमें यही कहा था कि "युसूफ़, ऐ सच्चे इन्सान" गोया वह सिद्क़ मुजस्सम थे। दरअस्ल उसमें इस वाक़्ये की तरफ़ इशारा था कि जो पेश आ चुका था और जिसकी वजह से यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को जेल जाना पड़ा था, जिसमें हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) यह फ़रमाते थे कि यह जो उसकी घर की औरतें है, यह उनकी चालें हैं और मैं तो तसव्वुर भी नहीं कर सकता था। लेकिन अज़ीज़–ए–मिस्र की बीवी ने फसाया और हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को अंदाज़ा हुआ कि यह मेरी आज़माइश है तो उन्होंने फ़रमाया कि ऐ अल्लाह! अगर जेल बेहतर है तो उसी का सामान कर दे। लिहाज़ा वह जेल चले गए। अब जब यह सारा वाक़्या हुआ तो उनकी सच्चाई उनके साथी ने देखी कि उनकी क्या ज़िन्दगी है। इसीलिए जब ख़िताब किया तो "यूसुफ़, ऐ सच्चे इन्सान" कहा। इसलिए कि उनकी सच्चाई उनके अमल से फूटती थी।

सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0):

हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) को "सिद्दीक़" इसीलिए कहा गया कि वह पूरी तरह से सच्चे थे, सिदक़े मुजस्सम थे। हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) का मामला यह था कि उन्होंने सबसे पहले अल्लाह के नबी (स0अ0) की तस्दीक़ (पुष्टि) की। वह ख़ुद सच्चे थे और सच को सच कहने वाले, सच को सच मानने वाले और उस

सच्चाई को फैलाने वाले थे। तस्दीक़ करने वाली सबसे पहले जो व्यक्ति हैं वह सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) है। कुरआन–ए–मजीद में एक जगह उसका ज़िक्र है:

"जो सच्चाई लेकर आया और जिसने इसको सच माना।" (सूरह जुमर: 33)

एक तो वह ज़ात जो सच्चाई लेकर आयी यानि अल्लाह के नबी (स0अ0) और एक वह ज़ात जिसने सबसे पहले तस्दीक़ की और वह हैं हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0)। कुरआन मजीद में हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) की यह बड़ी फ़ज़ीलत की बात है। अल्लाह के नबी (स0अ0) के साथ कई जगह उनका ज़िक्र किया गया है। एक जगह इरशाद है:

"जब वह अपने रफ़ीक़ से कह रहे थे कि ग़म मत करो यक़ीनन अल्लाह हमारे साथ है।"(सूरह तौबा)

जब हुज़ूर (स0अ0) हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) गार–ए–सोर में थे और दुश्मन बिल्कुल मालूम होता था कि अगर वह अपने क़दमों को देख लेंगे तो उनकी निगाह उन हज़रात पर भी पड़ जाएगी। ऐसी सूरते हाल में हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) को ख़्याल होगा कि अब क्या होगा?उन्होंने अल्लाह के रसूल (स0अ0) से यह सूरते हाल अर्ज़ की तो आप (स0अ0) ने उनसे फ़रमाया: घबराने की ज़रूरत नहीं है, वहां पर कुरआन मजीद ने जो अल्फ़ाज़ बयान किये हैं वह यह हैं "जब हज़रत मुहम्मद (स0अ0) ने अपने साथी से कहा" वहां "साहब" इस्तेमाल किया गया है। मानो कि सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) की सहाबियत नसे कुरआनी से साबित है। अल्लाह ने उनको जो मक़ाम दिया है, वह मक़ाम किसी को नहीं दिया है। इसलिए कई जगह यहां तक आता है कि अगर हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) के आमाल एक पलड़े में रखे जाएं और उम्मत के आमाल दूसरे पड़ले में रख दिए जाएं तो सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) का जो पलड़ा है वह झुक जाएगा। इस तरह की दूसरी रिवायात भी हैं जो हज़रत उमर (रज़ि0) और दूसरे लोगों से रिवायत हैं। यानि कि हज़रत सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) मुजस्सम थे, सरापा सच्चाई थे। सच्चाई को क़ुबूल करने वाले थे और सच्चाई को फैलाने वाले थे।

अच्छे साथ की ज़रूरत:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरते रहो और सच्चों के साथ रहो।"

सच्चाई ऐन ईमान है। इन्सान के अन्दर अगर झूठ है, तो मानो कि उसके ईमान के अन्दर मैल है। इसलिए कि ईमान और सच्चाई दोनों का चोली–दामन का साथ है। जो ईमान आया वह पूरी तरह से सच्चाई है। अल्लाह तआला की तरफ़ से आया। आप (स0अ0) पर वही आयी और आप (स0अ0) ने बिना कमी–बेशी उम्मत तक उसको पहुंचा दिया। यहां शुरू से लेकर आख़िर तक सच्चाई है। तो यह सच्चाई जो ईमान की है, यह हर ईमान वाले के लिए लाज़िम है और हर मोमिन को इसका जवाबदेह बनाया गया है कि वह सच्चाई को अपनाए और अपनी पूरी ज़िन्दगी उसके मुताबिक़ बनाने की कोशिश करे और यह सच्चाई है जिसकी अहमियत इस क़द्र है कि ऊपर दी गई आयत में अल्लाह तआला ने यह बात फ़रमाई कि:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह का तक़वा अख़्तियार करो, अल्लाह का लिहाज़ करो, अल्लाह से डरो, और सच्चो के साथ रहो।"

यहां अल्लाह तआला चाहते तो "मुत्तक़ियों के साथ रहो या नमाज़ पढ़ने वालों के साथ" फ़रमा देते या कोई भी इस्तेमाल होता, लेकिन यहां "सच्चे लोगों के साथ" फ़रमाया, जिससे अंदाज़ा होता है कि सिद्क़ या सच्चाई की अहमियत कितनी है और यह एक मेयार है।

हक़ का मेयार:

सच्चाई आदमी के हक़ होने का एक मेयार है। इसलिए कि आदमी अगर झूठ बोलता है या झूठ का प्रदर्शन करता है तो इस बात की पहचान है कि इसके अन्दर हक़ीक़त में ईमान की वह गहराई नहीं है जो याचित है। इसके अन्दर जितना झूठ है, उतना ही उसके ईमान के स्तर में उतनी गिरावट है और जितनी उसके अन्दर सच्चाई है, उतनी ही उसके ईमान के अन्दर हक़ीक़त है। .....(शेष पेज 14 पर)

ईमान व अमल का वास्तविक स्तर

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

"बेशक जो लोग ईमान लाए और जो लोग यहूदी हुए और नसारा व साएबीन, जो भी अल्लाह पर और आख़िरत पर ईमान लाया और अच्छे काम किए तो ऐसे कामों का अजर उनके रब के पास है, और उन पर न कोई ख़ौफ़ होगा न यह ग़मगीन होंगे।" (अलकुरआन)

तश्रीह (व्याख्या) से पहले यह मालूम हो जाए कि यह मुबारक आयत ईमानियात की तफ़सील बताने के लिए नहीं उतरी। इसलिए किसी के ज़हन में यह इश्काल (शंका) न आए कि इसमें तो अपने–अपने दीन पर रहते हुए अल्लाह और आख़िरत पर ईमान को काफ़ी क़रार दिया गया है। लिहाज़ा रसूलों पर ख़ासकर रसूलुल्लाह (स0अ0) पर ईमान ज़रूरी नहीं। हर शख़्स अपने मज़हब के दायरे में रहते हुए अल्लाह और आख़िरत पर ईमान का क़ाएल हो जाए, इसलिए अजर (बदल) यक़ीनी और जन्नत पक्की है। आयत का सही पसमन्ज़र न समझने से किसी को धोखा हो सकता है, या वहदत–ए–अदयान के क़ायल लोग इस आयत को उल्टा मतलब पहनाकर किसी को धोखा दे सकते हैं।

इसलिए सबसे पहले यह समझ लें कि यहां ईमानियात की तफ़सील बयान करना सिरे से मक़सूद (उद्देश्य) ही नहीं, वरना फ़रिश्तों पर, किताबों पर और रसूलों पर ईमान की बात ही नहीं है। मानो इस लिहाज़ से उन पर ईमान एतक़ाद (विश्वास) का हिस्सा ही नहीं?इसका कोई भी क़ायल नहीं है। यहां सिर्फ़ यह बात करना मक़सूद है कि नामों के सहारे किसी जमाअत में शामिल होना हरगिज़ काफ़ी नहीं है। जब तक ईमान की हक़ीक़त नहीं पाई जाएगी तब तक अल्लाह के यहां नजात (मुक्ति) नहीं मिल सकती है। यहूदी इस ख़तरनाक ग़लती का शिकार हो चुके हैं। लिहाज़ा मुसलमान यह न समझें कि वह भी ईमान वालों के गिरोह में शामिल हो गए तो उनकी नजात यक़ीनी है। नहीं! बल्कि अल्लाह पर सच्चा ईमान और आख़िरत पर पुख़्ता यक़ीन और उसके साथ नेक काम ज़रूरी है। जब तक यह बुनियाद क़ायम नहीं की जाएगी, कोई चाहे किसी भी गिरोह से कैसी भी निस्बत (संबंध) रखे कुछ फ़ायदा नहीं। नाम अस्ल में उनवान होते हैं और उनवान हक़ीक़त को उजागर करने के लिए होते हैं। हक़ीक़त की पर्दापोशी के लिए हरगिज़ नहीं। लिहाज़ा जिस ज़माने में सही दीन का जो भी नाम रहा हो इस हक़ीक़त समेत क़ाबिले क़ुबूल है, वरना क़ाबिले रद्द है। यहूदियों का यह अक़ीदा (आस्था) था कि जो यहूदी होगा वह जन्नत में जाएगा और यहूदियों का मतलब सिर्फ़ निस्बत–ए–यहूदियत का हासिल करना क़रार पाया। उनकी देखा–देखी ईसाईयों ने भी यही राग अलापना शुरू किया कि जो भी ईसाई निस्बत रखता हो, जन्नत उसके हक़ में साबित। अल्लाह ने दोनों के ख़्यालों को ख़त्म कर दिया;

"यहूदियों ने कहाः जन्नत में सिर्फ़ यहूदी जाएंगे, नसारा ने कहाः जन्नत में सिर्फ़ नसारा जाएंगे। (हक़ीक़ते दीन किसी के पास नहीं) यह उनकी ख़ाम ख़्याली है। आप कहिए सुबूत लाओ, अगर तुम सच्चे हो (वह सुबूत यह है) क्यों नहीं जो भी अपना रुख़ अल्लाह के सामने डाल दे (पूरा मुतीअ व फ़रमाबरदार बन जाए) और वह दिल का भी नेक हो, मुख़्लिस हो, तो उसे अपने रब के पास अपना अज्र मिलेगा। ऐसे लोगों पर न ख़ौफ़ होगा, न उनको कोई ग़म लाहिक़ होगा।

यहां यह भी बयान करना मक़सूद है कि कहीं यहूदी व ईसाई की देखा–देखी मुसलमान भी यह कहना शुरू न करें कि जो भी निस्बते इस्लाम रखेगा वह जन्नत में जाएगा, जहन्नम उस पर हराम होगी। जिस तरह यहूदी व ईसाई की बात ग़लत, अहले इस्लाम की भी यह बात ग़लत है। जब तक हक़ीक़ते इस्लाम नहीं पायी जाएगी, जन्नत का पाना नामुमकिन है। निस्बते इस्लाम मुनाफ़िक़ीन (कपटी) भी रखते थे लेकिन हक़ीक़ते दीन से महरूम, लिहाज़ा जन्नत तो दूर की बात, जहन्नम के भी सबसे निचले तबक़े में ढकेल दिए जाएंगे। इरशाद हैः "बेशक मुनाफ़िक़ीन जहन्नम के सबसे निचले तबक़े में पड़े होंगे और तुम उनके लिए कोई मददगार नहीं पाओगे।"

इस मुबारक आयत में दो बुनियादी अक़ाएद बयान किए गए हैं जिनको तस्लीम करने से बक़िया तमाम अक़ाएद का तस्लीम करना और अपनी अमली ज़िन्दगी उसके मुताबिक़ ढ़ालना आसान हो जाता है। "अल्लाह पर ईमान अक़ाएद व तस्दीक़ात की जान है।" गोया तमाम अक़ाएद का लब्बेलुबाब है, अगर सबकुछ हो और अल्लाह की वहदानियत का ही यक़ीन न हो तो फिर किसी चीज़ की न कोई हक़ीक़त, न कोई हैसियत, उसी के तहत फिर

अल्लाह के रसूलों पर ईमान, अल्लाह की किताबों पर ईमान, और अल्लाह के फ़रिश्तों पर ईमान का मामला है। अल्लाह पर ईमान का मतलब ही यह है कि अल्लाह ने जिस रसूल को भेजा है उस पर पूरा ईमान रखा जाए। उसके बिना अल्लाह पर ईमान कैसे पूरा हो सकता है। जबकि वही दुनिया में अल्लाह का नुमाइन्दा है। उससे पहले जितने नबी व रसूल गुज़रे हैं सब पर ईमान लाया जाए लेकिन सबसे आख़िर में जो हस्ती अल्लाह का पैग़ाम ला रही है, उसकी तमाम बातों को जैसे का तैसा तस्लीम किया जाए वरना कोई अगर यह कहे कि रसूल के बिना भी मैं अल्लाह पर ईमान रख सकता हूं और अल्लाह को मान सकता हूं तो उसके दावे का यही मतलब हुआ कि अल्लाह ने फ़िज़ूल (नऊज़बिल्लाह) रसूल को भेजा। और जो एहकामात अल्लाह ने उतारे वह सबके सब बेकार हैं, उनके बिना भी अल्लाह की इताअत व इबादत मुमकिन है। कोई यह कहे कि मैं फ़लां रसूल को तस्लीम करता हूं और उनके ज़रिए अल्लाह ने मुझे जो एहकाम दिए हैं वह मेरे लिए काफ़ी हैं लिहाज़ा मुझे किसी नये नबी की ज़रूरत नहीं, वह भी दरपर्दा अल्लाह पर इल्ज़ाम धर रहा है कि ख़्वाहमख़्वाह फ़लां को भेजने की ज़रूरत क्या थी। साबिक़ा फ़लां नबी और उनकी तालीमात काफ़ी थी। मुझे तो फ़लां की ज़रिए से जो तेरी हिदायतें मिली हैं वह पसंद हैं, और फ़लां के ज़रिए जो हिदायतें मिली हैं उस पर कोई अमल करना चाहे तो करे मैं तो नहीं कर सकता हूं। ज़रा दिल पर हाथ रखकर बताइए कि ऐसे शख़्स को अल्लाह का मुतीअ व फ़रमाबरदार कहा जाएगा या बाग़ी व मुनकिर। उसे कुछ भी कहा जाए अल्लाह का फ़रमाबरदार किसी सूरत में नहीं कहा जा सकता है। अलग–अलग नबियों की बात छोड़ें, एक ही नबी के ज़रिए अल्लाह की तरफ़ दो अलग–अलग वक़्त में दो अलग–अलग हुक्म आएं तो पहले हुक्म को बुनियाद बनाकर अगर कोई बाद के हुक्म को रद्द करता है तो वह भी रद्दे इबादत से बल्कि हद्दे दीन से निकल जाता है। पहले क़िब्ला बैतुल मुक़द्दस था। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने अल्लाह ही के हुक्म से हिजरत के बाद सोलह या सत्तरह महीने उसकी तरफ़ रुख़ करके नमाज़ें पढ़ीं। फिर हुक्म नाज़िल हुआ कि रुख़ काबातुल्लाह की तरफ़ किया जाए। अब अगर कोई यह कहे कि हमें तो पहला हुक्म पसंद है, दूसरे हुक्म पर हमसे तो अमल नहीं होगा, बल्कि यह हुक्म (ख़ाकिम बदहम) हमें कुछ ग़लत महसूस होता है। तो ऐसा शख़्स क्या अल्लाह पर ईमान रखने वाला क़रार पाएगा। इस तफ़सील से यह मालूम हुआ कि ईमान बिल्लाह का लाज़िमी जुज़ रसूलुल्लाह (स0अ0) पर ईमान है। इसीलिए अल्लाह की आख़िरी शरीअत के उतरने के बाद अब रसूलुल्लाह (स0अ0) मुकम्मल ईमान के बिना अल्लाह पर ईमान का तसव्वुर भी नहीं हो सकता है। इसलिए कुरआन ने बहुत ताकीद के साथ इताअते रसूल को इताअते ख़ुदा का वाहिद बुनियादी ज़रिया क़रार दिया है, जो रसूलुल्लाह (स0अ0) की इताअत करता है, उसी ने हक़ीक़त में अल्लाह की इताअत की।

एक जगह तो अल्लाह ने रसूलुल्लाह (स0अ0) का नाम लेकर सराहत फ़रमाई ताकि किसी के ज़हन में कोई ग़लत फ़हमी हो तो वह भी ख़त्म हो जाए, इरशाद है कि: "जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे काम किए और जो रसूलुल्लाह (स0अ0) पर नाज़िल शुदा किताब पर ईमान लाए और वही हक़ है उनके रब की तरफ़ से तो अल्लाह ऐसों से उनके गुनाहों को झाड़ देगा और उनकी हालत ठीक कर देगा।"

इन मुबारक आयतों के अलावा कुरआन में बहुत सी जगहों पर ''अल्लाह की इत्तेबा'' के साथ '' रसूलुल्लाह (स0अ0) की इत्तेबा'' मन्सबे रिसालत की अहमियत व इत्तेबा–ए–नबी की ज़रूरत बयान करने के लिए काफ़ी है।

ईमानियात की दूसरी बुनियाद ईमान बिल आख़िरत है। जिस तरह अल्लाह पर ईमान तमाम ईमानियात की जान है, उसी तरह ईमान बिल आख़िरत तमाम आमाल की जान है। यह सोच जितनी पुख़्ता होगी कि एक दिन अल्लाह के दरबार में हाज़िर होकर सब हिसाब देना होगा तो फिर ऐसा शख़्स अमली कोताह नहीं बनेगा। बस इस मुबारक आयत में इन दो बुनियादों को बयान करके अक़ाएद व आमाल का सच्चा मेयार पेश करने का हुक्म दिया गया है कि जो भी इस मेयार पर पूरा उतरेगा वह चाहे जो भी रहा हो या उस ज़माने में दीने इस्लाम का उनवान जो भी रहा हो वही अस्ली हिदायत पाया हुआ है जिसके लिए अल्लाह के पास बहुत बड़ा अज्र है और उसे न ख़ौफ़ लाहक़ होगा न ग़म। बाक़ी नामों के सहारे अल्लाह की अदालत में मुक़द्दमा जीतने की ख़्वाहिश एक दिलफ़रेब ख़्वाब के सिवा कुछ नहीं। इरशाद है: ''न तुम्हारी आरज़ुओं की कोई हैसियत, न अहले किताब की तमन्नाओं की कोई हक़ीक़त।''

मुहर्रम की बिदआत

प्रस्तुतिः शिबली - अक्सा

ताज़ियादारीः ताज़िया अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ दिलासा (धैर्य) देने के हैं। उर्फ में ताजिये की परिभाषा हजरत हुसैन (रज़ि0) के रौजे समान काग़ज़ और लकड़ियों आदि से निर्मित वह छवि है जिसके विभिन्न रूप होते हैं। शिया वर्ग ताज़िये के विभिन्न रूप की खातिर बड़ी मात्रा में पैसा खर्च करके हजरत हुसैन (रज़ि0) से अपना सच्चा प्रेम जताते हैं। ताज़िये के इतिहास के सम्बन्ध यह पता चलता है कि अमीर तैमूर लंग जो हजरत हुसैन (रज़ि0) के भक्तो में था, वह हर वर्ष हजरत हुसैन के रोजाए अतहर पर जाता था, एक बार राजनैतिक व्यस्तता के कारण वह अपनी उपस्थिति दर्ज नहीं करा सका, इसी लिए उसने रोजाए अतहर की एक छवि बनवाकर उसी से अपनी दिली सांत्वना प्राप्त की, यहीं से धीरे धीरे ताज़ियादारी को हर वर्ष बढ़ावा मिलता रहा, इसके बाद मअजुद्दौले देलमी ने इस पृथा को बढ़ावा देने में काफी अहम भूमिका निभाई, और नौबत यहां तक पहुंच गई कि हजरत हुसैन (रज़ि0) से सच्चा प्रेम करने वाला उसी को समझा जाने लगा जो मुहर्रमुलहराम में ताजियादारी के अन्दर सम्मिलित हो, और उसके साथ मातम एवं नौहाखानी की जो खुराफात हैं उनमें भी बढ़चढ़ कर भाग ले, खेद की बात है कि ऐसे व्यक्ति केवल अपने मनोरंजन के लिए इस्लामी शिक्षाओं को सिरे से नकार देते हैं और उन सभी सीमाओं का भी उल्लघंन कर जाते हैं जिनसे उन इस्लामी शहीदों की आत्माओं को भी कष्ट पहुंचे जिन्होनें सच्चे मार्ग की खातिर अपनी जानें न्योछावर कर दीं। इस्लाम के इन शहीदों की यह इच्छा बिल्कुल नहीं थी कि उनके नाम पर बिदआत व खुराफात का बाजार गर्म हो। इनके जीवन से तो यह पता चलता है कि वह सदैव ऐसी चीजो के विरोधी रहे जो शिर्क तक पंहुचाती हैं और किताब व सुन्नत से दूर करती हैं। हजरत अली (रज़ि0) जिनको शिया वर्ग अपना मुकतदा स्वीकार करता है वह खुद इसके विरोधी हैं। इन्हीं की एक धार्मिक पुस्तक (من لا يحضره الفقيه) में ताज़िये से सम्बन्धित हजरत अली (रज़ि0) का यह वाक्य लिखा हैः "जो व्यक्ति किसी कब्र को फिर से बनाए या उसकी छवि (ताज़िया) बनाए तो वह इस्लाम से बाहर है।"

दुख का महीना समझनाः रसूलुल्लाह (स0अ0) के जमाने में और इससे पहले जाहिली युग में भी मुहर्रम का महीना महानता वाला महीना समझा जाता था। जिन व्यक्तियों ने इस महीने में अल्लाह के दीन की तब्लीग़ (प्रचार) की खातिर अपनी जानों की भेंट दी थी, उनके लक्ष्य को आगे बढ़ाने की वाचा (अहद) ताजा होता था।

परन्तु खेद का विषय है कि इस्लाम के वह शत्रु जो प्रदर्शित रूप से मुसलमान दिखाई देते हैं उन्होंने इस महीने के सम्बन्ध में हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत की घटना का सहारा लेकर लोगों में यह संकल्पना सामान्य कर दी कि यह महीना अहले बैत से सच्चा प्यार रखने वाले हर व्यक्ति के लिए दुख मनाने का महीना है। इसमें कोई भी प्रसन्नता का कार्य करना उचित नहीं। इसमें दुख मनाने के जितने भी रूप धारण किए जाएंगे, सवाब भी उतना ही ज़्यादा मिलेगा। इसकी खातिर न जाने कितनी हदीसों को गढ़ा गया और उनके माध्यम से सीधे–साधे मुसलमानों को बहकाया गया। जबकि इस्लामी शिक्षाओं में यह बात स्पष्ट है कि किसी के लिए किसी भी व्यक्ति पर नियमित रूप से दुख मनाना तीन दिन से अधिक उचित नहीं। यही कारण है कि हजरत हुसैन (रज़ि0) की शहादत से पूर्व रसूलुल्लाह (स0अ0) के जीवन में आपके चचा हजरत हमजा (रज़ि0) की शहादत की भयजनक घटना सामने आई, जिसका आपके स्वास्थ्य पर गहरा पृभाव पड़ा था, परन्तु किसी भी एक हदीस से यह पता नही चलता कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने हर वर्ष उनका शोक मनाया हो, या अपने सहाबा में से जिन्होंने सच्चे मार्ग पर बलिदान दिया, उनमें से भी किसी का दुख मनाया हो। इसके अतिरिक्त रसूलुल्लाह (स0अ0) के वफादार सहाबा के जीवनों के सम्बन्ध में भी ऐसा कोई साक्ष नहीं मिलता।

यदि ऐसा होता तो सबसे बढ़कर अपने महबूब नबी हज़रत मुहम्मद मुस्तफा (स0अ0) की वफ़ात (मृत्यु) के महीने को वह दुख का महीना मानते, और इसमे दुख मानने के वह सब रूप धारण करते जिनसे उनके दुख की अभिव्यक्ति हो। परन्तु यह सभी काम इस्लामी शरीयत के विरूद्ध हैं, इसीलिए खैरूल कुरून (सहाबा के युग) में इनका कोई चर्चा नहीं मिलता। आप (स0अ0) ने यह बात स्पष्ट रूप से कह दी है कि किसी के लिए तीन दिन से अधिक दुख मनाना उचित नहीं। इरशाद नवबी हैः "तुम किसी शव पर तीन दिन से अधिक दुख न मनाओ, केवल स्त्री के कि वह अपने पति पर चार महीने दस दिन तक शोक मनायगी!"

इस प्रकार पता चलता है कि इस महान महीने को दुख का महीना समझना व्यर्थ है। इस्लाम धर्म के मानने वालों के लिए हर दिन और हर महीना प्रसन्नता का है, जो लोग इस महीने को दुख और शोक मनाने का महीना समझते हैं, वह वास्तव में या तो सबकुछ पता होते हुए भी व्यापार की खातिर उसके निमंत्रणकर्ता हैं या नासमझी के कारण वह यह सब कर रहे हैं।

मरसिया रव्वानी मरसिया अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ हैः "वह पंक्तियां जिनके माध्यम से मृतक पर दुख प्रकट किया जाए।" यह एक प्रकार की शायरी है। नबवी युग में हजरत खनसा बिन्ते शरीद को इस सम्बन्ध में अच्छी प्रसिद्धता प्राप्त थी। अरबी अदब में उनके मरसिए सन्दर्भ की स्थिति रखते हैं। मरसिए में कवि मरने वाले के गुणों का वरणन करता है जिसके सम्बन्ध मे स्वंय नबी (स0अ0) का कहना है कि "अपने मरने वाले की अच्छाइयों की चर्चा करो" अब यह चर्चा करना व्यक्ति की अपनी क्षमता पर निर्भर है, यदि किसी को शायरी से लगाव है तो वह पंक्तियों में पिरोकर किसी को श्रृद्धांजिली प्रस्तुत कर सकता है, और यदि कोई नसर से सम्बन्ध रखता है तो वह उस प्रकार से प्रस्तुत कर सकता है।

मुहर्रमुलहराम में कर्बला के शहीदों का चर्चा मरसिए के माध्यम ही से किया जिता है जोकि अपने आप में सही है, परन्तु इसके गलत होने का कारण एक अनावश्यक काम को आवश्यक बना लेना है। इसको नियमित रुप से प्रथा बना लेना और ऐसी पंक्तियां सम्मिलित करना जो कभी कभी व्यक्ति को शिर्क तक पहुंचा देती हैं और जिनसे अहले बैत एवं इस्लामी शहीदों की प्रशंसा के बजाए अत्यन्त अपमान हो जाता है। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने मरसिये ख्वानी के इस प्रकार को गलत बताया है। इब्ने माजा की एक रिवायत में आप (स0अ0) ने मुर्दे की अच्छाईयां बयान करके रोने से मना किया है।

यही कारण है कि मरसिये की इस वर्तमान प्रथा को सभी उल्माओं ने अवैध बताया है। मौलाना अहमद रजा खां साहब बरेलवी मुहर्मुलहराम के महीने में मरसिया ख्वानि आदि को अवैध बताते हुए लिखते हैंः "उनका अवैध होना निषेध और बुराइयों से भरा हुआ होने के कारण है।"

काले वस्त्रः मुहर्रमुलहराम के शुरू के दस दिनों काले वस्त्र पहनना शिया हजरात के यहाँ हजरत हुसैन (रज़ि0) की शहादत का शोक मनाने की पहचान है। इसीलिए पूरे अशरे में शिया लोग काले वस्त्रों को विशिष्ट रूप से पहनते हैं। जबकि दुख और शोक मनाने के लिए काले वस्त्र पहनने की आज्ञा न बुद्धि देती है और न ही नकल (शरीयत) से सिद्ध है। बुद्धि यूं नही देती कि यदि दुख की अभिव्यक्ति ही की नियत है तो इसके लिए विशिष्ट वस्त्रों की व्यवस्था करना आवश्यक नहीं, बल्कि जब मनुष्य दुख में होता है तो उसके पास इन सभी उपकरणों का समय ही नहीं होता। रही बात नक़ल की तो स्वंय शियों की पुस्तकों में उन के इमामों से इस से संबंधित बहिष्कार मौजूद है। उन्हीं की एक पुस्तक (عیون الاخبار) में हजरत अली का यह वाक्य मिलता हैः

"मेरे शत्रुओं के वस्त्र ना पहना करो, हुजूर (स0अ0) के शत्रुओं के वस्त्र काले हैं।"

इब्ने माजा की एक रिवायत से पता चलता है कि इस्लाम धर्म के चाहने वालों को यह बात बिल्कुल वैध नहीं कि वह दुख की अभिव्यक्ति के लिए विशिष्ट वस्त्रों की व्यवस्था करें। एक बार आप (स0अ0) ने कुछ व्यक्तियों को दुख की अभिव्यक्ति के लिए अपनी चादर उतारे केवल कुर्ता पहने हुए देखा तो आप (स0अ0) बहुत क्रोधित हुए और इसको जाहिली काम के समान बताया, जिससे यह पता चलता है कि आप (स0अ0) के चाहने वालों के लिए इस अनावश्यक व्यवस्था की कोई अनुमति नहीं।

ढोल–ताशाः विचित्र बात है कि ढोल–ताशों का बजाना आम तौर पर दुनियादारों के यहां प्रसन्नता के अवसरों पर होता है, परन्तु शिया हज़रात कर्बला के शहीदों की याद में दुख की अभिव्यक्ति के लिए एक प्रकार यह भी धारण करते हैं और इनकी देखा देखी कुछ मुसलमान भी इसमें कोई बुराई नहीं समझते। खुदा जाने इनका यह काम दुख की अभिव्यक्ति के प्रति है या इन के भीतर की प्रसन्नता है।

इनका यह काम चाहे कुछ हो, परन्तु सत्यता यह है कि इस्लाम धर्म से इस का कोई जोड़ नहीं है, क्योंकि एक ओर इस्लाम धर्म गाने–बजाने ही को राजी नहीं। दूसरी ओर इस मार्ग से वह सारी बुराइयां आती हैं जिनका हराम होना साफ तौर पर सिद्ध है। दुख की अभिव्यक्ति के लिए जो व्यक्ति ढोल–ताशे बजाते हैं, आमतौर पर उनकी दशा यह होती है कि शराब के नशे मे धुत, पवित्रता से दूर, फराइज से लापरवाह और अश्लीलता का पुतला बने होते हैं। यही कारण है कि खेल कूद के ऐसे साधनों पर इस्लाम ने कड़ी निन्दा की है। उल्मा–ए–उम्मत ने इनसे ताल्लुक को मुनाफिकत तक पहुंचने का ज़रिया बताया है। इस सम्बन्ध मे हजरत अबदुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि0) की एक प्रसिद्ध हदीस है: "गाना बजाना दिल में निफाक का बीज बो देता है।"

यही कारण है कि शरीअत में गाने–बजाने और इस प्रकार के साधनों पर बड़ी सख़्ती से प्रतिबन्ध लगाया गया है। इसको शैतानी काम बताया गया है। क्योंकि न केवल यह कि इस से मनुष्य का आमालनामा नष्ट होता है, अर्थात आधुनिक युग में चिकित्सक जांचों के अनुसार मनुष्य के शरीर पर भी इसका दुष्प्रभाव पड़ता है। नबी (स0अ0) ने अपना उद्देश्य बयान फ़रमाते हुए गाने–बजाने के साधनों से सम्बन्धित इरशाद फरमायाः "निःसन्देह अल्लाह तआला ने मुझे सारी दुनिया के लिए रहमत व निर्देशक बनाकर भेजा है और मुझे आदेश दिया है मआजिफ व मजामीर (गाने बजाने के साधन) और ढोल आदि के मिटाने का।"

मतमः हजरत हुसैन (रज़ि0) से प्रेम का दम भरने वाले शिया हज़रात मुहर्रमुलहराम के पहले अशरे () में आप (रज़ि0) की शहादत के दुख में मातम करने को अपना धार्मिक कर्तव्य समझते हैं। हजरत हुसैन की याद में सीना पीटते हैं और गिरेबान फाड़ते हैं, खूब रोना–पीटना करते हैं, दुख के नाम पर कभी अपने शरीर पर शीशा फोड़ते हैं, कभी आग पर चलते हैं, कभी तलवार पर, दुख की अभिव्यक्ति कम और बाजीगरी ज़्यादा, इसकी आरम्भिकता के सम्बन्ध में शियों की किताबों से पता चलता है कि यह जाहिली पृथा यजीद के राजदरबार से आरम्भ हुई (جلاء العيون) में है कि जब यजीद की पत्नि हिन्दा को हजरत हुसैन (रज़ि0) की शहादत का पता चला तो उसके घर मे गहने आदि उतार कर शोक के वस्त्र पहने, फिर वह सभी जाहिली कार्य किए जो नबवी शिक्षाओं के विरूद्ध थे, इस दुख का प्रचलन लगातार तीन दिन तक रहा। वहीं से शोक विलाप की यह बुरी पृथा चल पड़ी जो आज अपने बहुत से रूपों में अधर्म व्यक्तियो के यहाँ मिलती है।

खेद की बात है कि कुछ साधारण मुसलमान या स्वाभाविक इच्छाओं के पीछे चलने वाले व्यक्ति भी ऐसी फ़ितने वाली चीजों से इतना प्रभावित हो जाते हैं कि इनको ऐसी घिनौनी हरकतों पर शरीअत की लज्जा भी नही आती। नबी (स0अ0) ने इन सभी को जाहिली काम बताया है, यही कारण है कि सभी उल्मा–ए–अहले सुन्नत–वल–जमाअत सदैव इसके विरोधी रहे हैं। स्यंव शियों की पुस्तकों से ज्ञात होता है कि उनके यहां भी ऐसे जाहिलय्यत वाले कामों पर रोक है। उन्ही की एक पुस्तक "आलामुलवरा" मे हजरत हुसैन (रज़ि0) ने अपनी बड़ी बहन को यह वसीयत की "ऐ बहन मैं तुझे सौगन्ध देता हूं, तू मेरी सौगन्ध की लाज रखना, जब मेरी मृत्यु हो जाए तो मुझ पर गिरेबान न फाड़ना, न अपने चेहरे को नोचना, और न हाय मुसीबत, न हाय तबाही के शब्दों से शोर मचाना।"

रसूलुल्लाह ﷺ की संतान

रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की सारी संतान खदीजा (रज़ि0) से पैदा हुईं, सिवाए इबराहीम के, निम्न में उनका संछिप्त वर्णन किया जा रहा है

1– अल–कासिमः यह रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की संतान में सब से बड़े थे। इनके नाम से ही आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की कुन्नियत अबुल कासिम थी। दो वर्ष की आयु में इनका देहांत हो गया।

2– जैनब (रज़ि0): यह रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की सब से बड़ी पुत्री थीं। अल्लाह को मानने के कारण पीड़ित हुईं तो रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमायाः यह मेरी सब से प्रतिष्ठित पुत्री है। कासिम के बाद पैदा हुईं और अबूल–आस (रज़ि0) से विवाह हुआ, वह उनकी मौसी हाला बिन्ते खुवैलिद का बेटा था। जैनब को एक बेटा हुआ जिसका नाम अली था और बेटी जिसका नाम उमामा रखा गया था। इन्हीं को रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) नमाज में अपने

कंधे पर उठाए होते थे। जैनब (रज़ि0) का मदीने में सन आठ हिजरी के आरंभ में देहांत हुआ।

3– रुकैय्या (रज़ि0): इनका विवाह उसमान बिन अफ़्फ़ान (रज़ि0) से हुआ था। इन से एक बेटा अब्दुल्लाह पैदा हुआ जो 6 वर्ष का हुआ तो एक मुर्गी ने उनकी आँख में चोंच मार दिया जिसके कारण उनका देहांत हो गया। बद्र के युद्ध के समय रुकैय्या (रज़ि0) की मृत्यु हुई।

4– उम्मे कुल्सुम (रज़ि0): रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इन का विवाह रुकैय्या के देहांत के बाद उस्मान बिन अफ़्फ़ान (रज़ि0) के साथ कर दिया था। इन से कोई औलाद नहीं हुई । शाबान सन् 9 हिजरी में इन का देहांत हो गया । इन्हें बकीउल–गर्क़द में दफन किया गया।

5– फ़ातिमा (रज़ि0): यह रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की सब से छोटी और सब से चहेती बेटी थीं। यह जन्नती महिलाओं की सरदार हैं। रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने बद्र के युद्ध के बाद अली बिन अबी तालिब (रज़ि0) के साथ इनका विवाह किया। इनको दो बेटे हसन (रज़ि0) और हुसैन (रज़ि0) और दो बेटियाँ जैनब और उम्मे–कुल्सुम हुईं। उम्मे–कुल्सुम से उमर बिन खत्ताब ने शादी की थी। इन से ही ज़ैद का जन्म हुआ। उमर बिन खत्ताब की मृत्यु के बाद औन बिन जाफर से उनकी शीदी हुई। औन की मृत्यु के बाद उन के भाई मुहम्मद ने उन से विवाह कर लिया और मुहम्मद की मृत्यु के बाद उन के भाई अब्दुल्लाह ने इन से विवाह कर लिया, उन्हीं के पास इनका देहान्त हुआ। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की मृत्यु के 6 महिने बाद फ़ातिमा (रज़ि0) का देहांत हो गया।

उपर बयान किए गए पाँचो औलाद की पैदाइश नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को नबी बनाए जाने से पहले हुआ।

6– अब्दुल्लाहः कहा जाता है कि इन का जन्म इस्लाम में हुआ और बचपन में ही इन का देहांत हुआ। यह ख़दीजा (रज़ि0) की सब से छोटी संतान थे।

7– इब्राहीमः मदीने में मारिया कब्तिया से जुमादिल ऊला या जुमादिल आखिर सन् 9 हिजरी में पैदा हुए और 29 शव्वाल सन् 10 हिजरी में इनका देहांत हुआ, उस दिन मदीना में सूर्य ग्रहण था। देहांत के समय 16 या 18 महीने के थे। बकीअ में इनको दफन किया गया।

शेषः सच्चाई क्या है?

इसलिए फ़रमाया कि सच्चों के साथ रहो, मानो कि यह सच एक मेयार है। अगर आदमी की ज़िन्दगी देखनी है कि वह अल्लाह का नेक बन्दा और अल्लाह का वली है या नहीं?तो सबसे पहले मरहले में यह देखने की ज़रूरत है कि वह सच्चा है?वह सच बोलता है?उसकी ज़िन्दगी सच्ची है या वह झूठ का सहारा लेता है? क्योंकि इस ज़माने में जो फ़ितने हैं, उनमें एक बड़ा फ़ित्ना यह है कि आदमी समझता है कि झूठ से हमारी दुकान चलेगी, वह दुकान चाहे मदरसे की हो या ख़ानकाह की हो। यह मदरसे और ख़ानक़ाहें सच्चाई के मरकज़ हैं। यहां सच पढ़ाया जाता है। सच बताया जाता है। अब अगर कोई यहां भी झूठ का सहारा ले तो ज़ाहिर है कि वह दीन को बदनाम कर रहा है। मानो वह सच के मरकज़ को बदनाम कर रहा है, और अफ़सोस की बात है कि चूंकि लोगों ने दीन को कमाई का ज़रिया बना लिया है, इसलिए यह सारी खुराफ़ाते अब उन जगहों पर हो रही हैं। हालांकि हदीस में आता है कि अगर कोई दीन के ज़रिये दुनिया कमाता है तो क़यामत के दिन उसको जन्नत की खुशबू भी नहीं मिलेगी। रसूलुल्लाह (स0अ0) का इरशाद हैः

"वह शख़्स क़यामत के रोज़ जन्नत की ख़ुशबू भी नहीं पा सकेगा।"

हदीस से साफ़ मालूम होता है कि जो शख़्स दीन के ज़रिये से दुनिया कमाता है, क़यामत के दिन उसको जन्नत की ख़ुशबू भी नहीं मिलेगी और यह हक़ीक़त है कि आज दीन के ज़रिये जो भी दुनिया कमाने वाले हैं, वह सबसे ज़्यादा झूठ का सहारा लेते हैं। कहते हैं कि हमारे मदरसे में इतने लड़के हैं, इतना ख़र्च है, हमारी ऐसी ख़ानक़ाह है और हमारी ऐसी करामात हैं और ऐसे ख़्वाब हैं, अब इसमें कितना सच है और कितना झूठ है? इसकी कोई हद नहीं है। वाक्या यह है कि जो सूरते हाल है, उससे सबसे ज़्यादा नुक़्सान पहुंच रहा है। इससे दीन बदनाम हो रहा है।

फ़िरऔन की लाश

(रिसर्च)

डॉक्टर मोरिस बुकाए

फिरऔन (Pharao) नाम नहीं बल्कि मिस्र के बादशाहों की उपाधि (Common Title) है। ऐसे लगभग 14 फिरऔन अर्थात मिस्र के बादशाहों के नाम मिलते हैं। रामेसेस महान के उन्नीसवे वंश का तीसरा फिरऔन (Pharao) (Ramesses II) की लाश पर फ्रांस के इसाई डाक्टर मोरिस बोकाय की रिसर्च के कारण लगातार चर्चा में बना हुआ है। रिसर्च करके उन्होंने माना कि यह वही फिरऔन है जिसकी कुरआन में भविष्यवाणी की गयी थी कि अल्लाह इसकी लाश इबरत (Warning) के लिए सलामत रखेगा।

धर्मग्रंथ के सच्चे होने की एक निशानी यह भी होती है कि उसमें कही गयी बातें देर–सवेर किसी तरह सच साबित होती हैं जैसे की फिरऔन बादशाह की लाश और कुरआन पर हुई रिसर्च के बाद ईसाई दुनिया में तहलका मच गया था। स्वयं रिसर्च करने वाला मुसलमान हुआ या नहीं इस बात में शक हो सकता है लेकिन उसके सच बोलना पसंद करने कारण लाखों ईसाईयों को इस्लाम की तरफ आने का कारण बना इस बात में कोई शक नहीं। फ्रांस जहां कि आज मुसलमानों की जनसंख्या दूसरे नंबर है इस रिसर्च के बाद फिर इसी डॉक्टर कि पुस्तक (The Bible-The Quraan & Science) से भी इसाई दुनिया इस्लाम की ओर आकर्षित हुई थी। इस रिसर्च के बाद इसाई और यहूदियों ने फिरऔन के अंत को अपनी धार्मिक किताबों में बदलना शुरू कर दिया। झूठा इतिहास तैयार करने का सबूत 'टेंथ कमांडेट' में फिरऔन को डूबता नहीं बल्कि जंग से महल वापस जाता दिखाया गया है।

थोड़े–थोड़े समय बाद कुरआन अपना ईश्वरीय कलाम होना साबित करता रहा है जैसे इस लेख में जानेंगे कि फिरऔन का जिस्म और रिसर्च करने वाले डाक्टर ने सच्चाई को समझ कर बाकी जिंदगी कुरआन की सच्चाई से दूसरों को अवगत कराने में बिता दी।

मोरिस बुकाय (Maurice Bucaille) (जन्म 1920) फ्रेंच चिकित्सक थे। पेरिस के अस्पताल में सर्जिकल में विशेषज्ञ के रूप में काम करते रहे। प्रतिष्ठा का सबसे बडा कारण पुस्तक "बाइबल कुरआन और विज्ञान" है, जिसमें आपने यह साबित किया है कि कुरआन की कोई बात वैज्ञानिक दृष्टिकोण के खिलाफ नहीं है। जबकि बाइबल की कई बातें आधुनिक वैज्ञानिक तथ्यों से गलत साबित होती हैं। यह फ्रेंच किताब बहुत लोकप्रिय हुई और कई उर्दू, इंग्लिश सहित कई भाषाओं में अनुवाद किया गया। इस्लामी दुनिया में किताब बहुत लोकप्रिय हुई और इस रिसर्च को "ब्यूकलीजम" नाम दिया गया।

फिरऔन की लाश के बाल भी अलग–अलग दिखायी देते हैं अगर यह ममी होती तो तमाम हिस्से पर मेंहदी की तरह हड्डियों को सलामत रखने वाला मसाला लगा होता।

फ़िरऔन का शरीर फ़्रांस में: फ्रांस के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वह पुरातत्व का सबसे अधिक सरपरस्ती करने वाला देश है, जिस समय फ्रांस का प्रधान मंत्री फरांसू मीटारान François Mitterrand 1981 में हुआ तो उसने मिस्र से मिस्र के फिरऔन की लाश मांगी ताकि उस पर कुछ चिकित्सा अनुमान Archaeological tests and euaminations किया जाये। अतः फिरऔन की लाश फ्रांस लाई गयी और जिस समय यह लाश फ्रांस के हवाई अड्डा पर विमान से उतरी तो फ्रांस के प्रधानमंत्री ने उसका इस प्रकार स्वागत किया कि लगता था फिरऔन जिवित है तथा अब भी चीख रहा है कि मैं तुम सबका सब से बडा पालनहार हूं।

अतः शव फ्रांस के पुरातत्व सेन्टर ले जायगा गया ताकि बड़े–बड़े चिकित्सक उसके बारे में रिसर्च करें तथा चिकित्सकों के प्रधान मोरिस बुकाय थे। रिसर्च में मोरिस बुकाय का ध्यान इस पर था कि यह पता लगाया जाये कि इस फिरऔन का देहांत कैसे हुआ है जबकि दूसरे लोग कुछ और ही गवेषणा कर रहे थे। जांच से पता चला कि यह अर्थात जिसका यह शव है वो रात के अन्तिम समय में जलमग्न हो (डूब) कर मरा है क्योंकि उसके शरीर पर कुछ समुन्द्री नमक का भाग बाकी था। साथ ही साथ यह भी पता चला कि उसकी लाश डूबने के कुछ ही समय बाद निकाली गयी है। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि दूसरी फिरऔनी लाशों के अलावा इसकी लाश केवल इस प्रकार सुरक्षित क्यों बाकी है जब कि सारी लाशें समुंद्र से निकाली गयी हैं?

मोरिस बुकाय सारे रिसर्च की फाइनल रिपोर्ट लिख

रहे थे कि अचानक एक आदमी ने उनके कान में चुपके से कहा कि जल्दी न करो मुसलमान लोगों का कहना है कि वह जलमग्न होकर मरा है। परन्तु मोरिस ने इस सूचना को बिल्कुल नकार दिया तथा आश्चर्य में पड़ गए कि इस प्रकार का ज्ञान बडी मशीनों से रिसर्च करने के बाद ही हो सकता है। फिर उसी आदमी ने कहा कि वह कुरआन जिस पर मुसलमान विश्वास करते हैं उसमें इसके जलमग्न होने तथा इसकी लाश के सुरक्षित रहने का वर्णन आया है। इस से उनका आश्चर्य और ही बढ़ गया तथा लोगों से पूछने लगे कि यह कैसे हो सकता है? जबकि इस लाश का गवेषणा लगभग दो वर्ष पहले 1898 में हुआ है जबकि उनका कुरआन 1400 सौ सालों पहले से है। यह बात बुद्धि में कैसे आ सकती है? जब कि केवल अरब ही नहीं बल्कि सारे के सारे मनुष्य कुछ वर्ष पहले मिस्र के पुराने लोग अपने फिरऔनों पर मसाला लगाना जानते हैं।

मोरिस बुकाय पूरी रात बैठ कर ध्यान पूर्वक अपने मित्र की बात को सोचते रहे कि मुसलमानों के कुरआन में डूबने के बाद इस लाश के बचने का वर्णन आया है। जबकि तौरात में यह है कि फिरऔन उस समय डूबा है जब मूसा भाग रहा था और इस में उसकी लाश के बारे में कोई चर्चा नहीं है। अतः मोरिस अपने दिल में कहने लगे कि क्या यह बात बुद्धि में आने वाली है कि यह मेरे सामने जो लाश है यह वही मिस्र का फिरऔन है जिसने मूसा को भगाया है?तथा क्या यह बात बुद्धि में आने वाली है कि मुसलमानों का मुहम्मद (स0अ0) यह बात एक हजार वर्ष से अधिक पहले जान जाये? और मैं अब जान पाया हूं।

मोरिस सो न सके तथा तौरात मंगाया और तौरात में पाया कि जल ने फिरऔन की सारी सेना को लपेट लिया और उनमें से कोई न बचा। परन्तु मोरिस को बराबर आश्चर्य रहा कि पूरे तौरात में कहीं भी इसकी लाश के ठीक–ठाक बच जाने का वर्णन नहीं मिलता है।

फिरऔन की लाश को चिकित्सा एवं सुधार के बाद फ्रांस ने फिरऔन के वैभव के अनुसार शीशे के ताबूत में भेज दिया। परन्तु मोरिस को उस बात के कारण जो उन्होंने फिरऔन की लाश के बारे में मुसलमानों की ओर से सुना था चैन न आया। इसी कारण सफर की तैयारी करके सउदी अरब में एक चिकित्सा सम्मेलन में भाग लेने के लिये गये जिस में बहुत से मुसलमान शव परीक्षा करने वाले भी भाग ले रहे थे। वहां पर सबसे पहले मोरिस ने फिरऔन की शव के बारे में जो खोज लगाया था उसी का चर्चा किया। तुरंत एक मुसलमान ने कुरआन खोल कर ईश्वरीय वाणी दिखायाः "अतः आज हम तेरे शरीर को बचा लेगें, ताकि तू अपने बाद वालों के लिए एक निशानी हो जाए। निश्चय ही, बहुत–से लोग हमारी निशानियों के प्रति असावधान ही रहते है।" (कुरआन–10:92)

कुरआन की इस आयत का मोरिस पर बहुत बडा प्रभाव पड़ा तथा दिल में इस प्रकार आवेश पैदा हुआ कि सारे लोगों के सामने खडे होकर निसंकोच हो कर घोषणा कर दिया कि मैंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया तथा इस कुरआन पर विश्वास कर लिया।

मोरिस फ्रांस से वापस आये तथा लगभग दस वर्ष तक बिना किसी दूसरे कार्य के इस रिसर्च में लग गये कि आज के समय के नए वैज्ञानिक सिद्धांत एवं अनुसाधान कुरआन से कितना मेल खाते हैं। ताकि कुरआन की इस आयत का परिणाम उन्हें मिल सके।

अब ये अत्याचारी जो कुछ कर रहे है, उससे अल्लाह को असावधान न समझो। वह तो इन्हें बस उस दिन तक के लिए टाल रहा है जबकि आँखे फटी की फटी रह जाएँगी। (कुरआन–14:42)

कुछ ही वर्षों के बाद मोरिस ने फ्रांस में कुरआन के बारे में एक पुस्तक लिखी जिस से पूरे पश्चिमी देश तथा पश्चिमी वैज्ञानिकों को हिला दिया। इस पुस्तक का नाम थाः "कुरआन, तौरात, इन्जील एवं ज्ञान, नये मर्म के अनुसार पवित्र पुस्तकों पर रिसर्च –कुरआन और नया चैलेंज।"

इस पुस्तक ने क्या किया? जैसे ही पहली बार छपी सारी दुकानों से तुरंत समाप्त हो गयी। फिर फ्रांसिसी भाषा से अरबी, इंग्लिश, इन्डोनेसी, फारसी, तुर्की, उर्दू, गुजराती, अलमानी आदि भाषा में अनुवाद होकर पुनः छापी गयी ताकि पूरब से पश्चिम तक सारे पुस्तकालय में उपलब्ध हो जाये।

यहां यह बात भी याद रहे कि मोरिस की इस पुस्तक पर यहूदी और ईसाई धर्म के सारे वैज्ञानिकों ने खण्डन करने तथा उत्तर देने के प्रयास किया परन्तु किसी ने भी कोई ढंग की पुस्तक न लिखी दाये बायें बहुत चक्कर लगाया परन्तु कोई विशेष बात न लिख सके।

इससे आश्चर्य की बात यह है कि अरब इलाके के कुछ ईसाई एवं यहूदी वैज्ञानिक ने भी खण्डन करने का प्रयास किया परन्तु जब मोरिस की पुस्तक को ध्यान पूर्वक पढ़ने लगे तो मुसलमान हो गये।

रसूलुल्लाह (स0अ0) का मुल्क-ए-शाम का दूसरा सफ़र

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

रसूलुल्लाह (स0अ0) ने मुल्क-ए-शाम (वर्तमान सीरिया) का दूसरा सफ़र पच्चीस साल की उम्र में किया और यह सफ़र एक सफल व्यापारी की हैसियत से हुआ था। बारह साल की उम्र में किए गए ऐतिहासिक सफ़र के बाद रसूलुल्लाह (स0अ0) का देश से बाहर का यह दूसरा सफ़र था। इस अवधि में विभिन्न दिलचस्प घटनाएं भी हुईं जिनसे रसूलुल्लाह (स0अ0) का व्यक्तित्व मक्का वालों के लिए अधिक लाभकारी साबित हो गया था। फिर भी इस दौरान रसूलुल्लाह (स0अ0) ने व्यापार को आस-पास के स्थानों में जारी रखा तथा अरब के मशहूर बाज़ारों में भी गए। रसूलुल्लाह (स0अ0) की इस अवधि में समाजी इख़्तेलात से कई चीज़ें वाज़ेह हो गईं थीं, यानि आपकी अमानतदारी, पासेवफ़ा, सिद्क़गोई, हिल्म व फ़ज़्ल, तवाज़ो व सख़ावत। यही वजह है कि मक्का के लोग कम उम्र ही में आपको "सादिक़" और "अमीन" लक़ब से पुकारने लगे थे और उन्हें ख़सायले हमीदा और बुहैरा राहिब के तासुराती कलिमात के पेशनज़र अबूतालिब को भी यक़ीन था कि उनके भतीजे की शान सबसे निराली है और किसी की गुज़न्द उन्हें कोई नुक़सान पहुंचाने वाली नहीं है।

जब रसूलुल्लाह (स0अ0) की उम्र पच्चीस बरस की हुई तो शफ़ीक़ चचा ने महबूब भतीजे की अज़मत का आफ़ताब उरूज पर देखा और उनकी हुनरमन्दी का एतराफ़ हर आम व ख़ास की ज़बान पर पाया और दूसरी तरफ़ अपनी ग़ुरबत और मुफ़लिसी पर भी नज़र डाली, जिसके बाद यह ख़्याल हुआ कि भतीजे को क़ुरैश के काफ़िले के साथ मुल्के शाम के तिजारती सफ़र पर रवाना कर दिया जाए। परवरदिगार ने भी उनके हाथ में बड़ी बरकत रखी है, लेकिन माल की इतनी फ़रावानी न थी कि तिजारत की जा सके। इसीलिए शरीफ़ व नजीफ़ भतीजे से मशविरा किया और कहा; भतीजे! मैं एक मुफ़लिस शख़्स हूं और मुझ पर ज़माने की सितमज़रीफ़ी तुम पर अयां हैं। मक्का की क़हतसाली ने हमारा जो बुरा हाल किया है, उससे भी तुम बख़ूबी वाक़िफ़ हो। न हमारे पास कोई ज़रिया-ए-माश है और न कोई वसाएले तिजारत। और अब क़ुरैश के काफ़िले का शाम रवाना होने का वक़्त आ चुका है और इस काफ़िले में हर साल ख़दीजा बिन्ते ख़ुवैलद का माल भी "मुज़ारिबत" पर जाता है, जिसका मुनाफ़ा सबसे ज़्यादा होता है। मेरा ख़्याल है कि अगर तुम हज़रत ख़दीजा रज़ि0 के सामने अपनी इस ज़रूरत को बयान करो और उनका माले तिजारत लेकर शाम का सफ़र करो तो बहुत बेहतर है, और मुझे क़वी उम्मीद है कि हज़रत ख़दीजा तुम्हारी बात को हरगिज़ नहीं टालेंगी और वह हर हाल में तुम्हें तरजीह देंगी, गरचे मुझे तुम्हें मुल्के शाम भेजना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता, मगर वाक़्या यह है कि इसके सिवा हमारे पास कोई और हल भी नहीं है।

रसूलुल्लाह (स0अ0) को अपने महबूब चचा की यह राय बहुत पसंद आयी, मगर ग़ैरत ने यह गवारा न किया कि हज़रत ख़दीजा तक अपने इस इरादे को दरख़्वास्त की सूरत में पेश करें और न ही अल्लाह तआला की तरफ़ से इसका मौक़ा दिया गया। बल्कि जैसे ही हज़रत ख़दीजा को किसी ख़ुफ़िया तरीक़े से चचा-भतीजे के इस मशवरे का इल्म हुआ तो उन्होंने फ़ौरन अपनी तरफ़ से माल ले जाने की रसूलुल्लाह (स0अ0) से दरख़्वास्त फ़रमाई जिसको रसूलुल्लाह (स0अ0) ने ख़ुशी-ख़ुशी क़ुबूल फ़रमाया। चूंकि हज़रत ख़दीजा रज़ि0 मक्का मुकर्रमा में रसूलुल्लाह (स0अ0) के औसाफ़े हमीदा के चर्चे सुन चुकी थीं, इसलिए उन्होंने यह भी कहा कि मैं मुहम्मद (स0अ0) को उससे ज़्यादा माल अता करूंगी जो दूसरों को देती हूं, और साथ ही बतौर मुआविन व ख़ादिम अपने ग़ुलाम मीसरा को भी रवाना किया।

क़ुरैश का यह मुबारक तिजारती काफ़िला कुछ ही दिनों में मुल्के शाम पहुंच गया और बसरा की तिजारती मंडी के क़रीब खेमाज़न हुआ। इसी इलाक़े में एक ईसाई राहिब की ख़ानक़ाह थी, जिसका नाम नस्तूर था। शायद यह वही ख़ानक़ाह थी, जिसमें तेरह साल पहले बुहैरा राहिब से मुलाक़ात हुई थी और अब इसमें नस्तूर नामी राहिब मुक़ीम था। उस राहिब ने अपनी ख़ानक़ाह से देखा कि रसूलुल्लाह (स0अ0) एक तारीख़ी दरख़्त के नीचे आराम फ़रमा हैं। इस दरख़्त के मुताल्लिक़ नस्तूर को मसीही रिवायात की रोशनी में इल्म था कि उसके नीचे नबी ही क़याम कर सकता है, चुनान्चे नस्तूर अफ़रत जज़्बात में अपनी ख़ानक़ाह से बाहर आया और मीसरा से

रसूलुल्लाह (स0अ0) के बारे में पूछा (नस्तूर राहिब मीसरह को पहले से जानता था, मुमकिन है कि मीसरा हज़रत ख़दीजा के माले तिजारत की निगेहबानी के बतौर पहले भी आते रहे हों) मीसरह ने रसूलुल्लाह (स0अ0) का जामेअ तआरुफ़ कराया और अस्नाए सफ़र ख़रक़ आदत पेश आने वाले वाक़्यात का भी ज़िक्र किया। नस्तूर ने मालूम किया कि क्या उनकी आंखों में कुछ सुर्ख़ी भी है?मीसरह ने जवाब दियाः हां! हमेशा रहने वाली सुर्ख़ी है, यह जवाब सुनकर राहिब ने बरमला इस हक़ीक़त का एतराफ़ किया कि वही है, यही आख़िरी नबी हैं, काश मुझे उसका ज़माना नसीब होता। मीसरह के ज़हन व दिमाग़ पर राहिब की यह बातें नक़्श हो गयीं।

सफ़र की थकावट दूर हुई तो क़ाफ़िला शुगले तिजारत में मशगूल हो गया और आपने कसीर तादाद में माल को बहुत ही क़लील मुद्दत में फ़रोख़्त कर दिया और आपको ग़ैर मामूली मुनाफ़ा भी हासिल हुआ। उन्हीं अय्याम की बात है कि एक रोज़ बसरा की मन्डी में माले तिजारत फ़रोख़्त करते वक़्त किसी शख़्स से भाव–ताव में कोई इख़्तिलाफ़ हो गया, जिस पर वह शख़्स आग–बबूला होकर लात व उज़्ज़ा की क़समें खाने लगा और हुज़ूर स0अ0 से भी उन झूठे माबूदों की क़समें खाने को कहने लगा, इस पर आप स0अ0 ने इन्तिहाई जुर्रत मन्दाना लहजे में यूं ख़िताब कियाः "मैंने उन दोनों की कभी क़सम नहीं खाई और मैं उन दोनों के पास से जब भी गुज़रता हूं तो उनको नज़रअंदाज़ कर देता हूं।"

रसूलुल्लाह (स0अ0) की मतानत, हक़ गोई व बेबाकी देखकर उस शख़्स ने कहाः आप बिल्कुल दुरुस्त बात कहते हैं और हक़ीक़त यह है कि यह बात सिवाए नबी के कोई नहीं कह सकता। कुछ दिनों में जब काफ़िला अपने मक़सद के हुसूल में पूरी तरह कामयाब हो गया, तो तिजारती काफ़िले ने मक्का का कूच किया। यहां अहले मक्का इस काफ़िले की वापसी के शिद्दत से मुन्तज़िर थे। चुनान्चे जब क़ाफ़िला मक्का पहुंचा तो हज़रत अपने बाला ख़ाने से अपनी सहेलियों के साथ इस ख़ूबसूरत मंज़र का नज़ारा कर रही थीं। इसी नज़ारे में उन्होंने एक अनोखा मुशाहिदा यह भी किया कि दो फ़रिश्ते हैं जो आप स0अ0 पर सायाफ़गन हैं। हज़रत ख़दीजा ने यह फ़रहतबख़्श मन्ज़र अपनी सहेलियों को भी दिखाया और हर एक यह मंज़र देखकर हैरत में पड़ गया।

रसूलुल्लाह (स0अ0) ने सफ़र से वापसी में मक्का दाख़िल होते ही सीधे हज़रत ख़दीजा के घर का रुख़ किया और इस सफ़र में जो ग़ैर मामूली नफ़ा हासिल हुआ था, उस तमाम मुनाफ़े का हिसाब दिया, फिर अपने घर वापस हुए। हज़रत ख़दीजा रज़ि0 को आपका यह नेक अमल और आपकी मेहनत व बरकत से माले तिजारत की मुनाफ़अत बहुत पसंद आयी।

जब यह मुबारक सफ़र ख़त्म हुआ और लोग अपनी–अपनी मंज़िलों पर पहुंच गए तो मीसरह ने अपने ज़ाति मुशाहदात व तासुरात हज़रत ख़दीजा को गोशे गुज़ार कराए। उन्होंने कहाः मैंने सफ़र के दौरान रसूलुल्लाह (स0अ0) के साथ बहुत से ख़रके आदत वाक़्यात पेश आते देखे। मैंने देखा कि जब रसूलुल्लाह (स0अ0) तेज़ धूप में चलते थे तो दो फ़रिश्ते आप पर साया फ़गन हो जाते थे और जब हम बसरा की मंडी में उतरे तो वहां नस्तूर राहिब ने उनके बारे में बड़ी हैरतअंगेज़ बाते बयान कीं और जब हम सामाने तिजारत फ़रोख़्त कर रहे थे तो रसूलुल्लाह (स0अ0) ने लात व उज़्ज़ा की क़सम खाने से इनकार कर दिया। यह सुनने के बाद हज़रत ख़दीजा रज़ि0 के सामने रसूलुल्लाह (स0अ0) की नाफ़ईयत दो–दो चार की तरह वाज़ेह हो चुकी थी और आप स0अ0 की सालिहियत व सलाहियत दिल में घर कर गई थी। चुनान्चे यही असबाब रसूलुल्लाह (स0अ0) के अक़्दे अव्वल की तम्हीद साबित हुए। और इसी सफ़रे शाम के चन्द महीनों बाद रसूलुल्लाह (स0अ0) का तारीख़ साज़ अक़्द हज़रत ख़दीजा रज़ि0 से हुआ।

हाफ़िज़ इब्ने मन्दा ने एक ज़ईफ़ सनद से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने बीस साल की उम्र में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि0 के साथ मुल्के शाम का तिजारती सफ़र किया था और इसमें हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि0 की बुहैरा राहिब से मुलाक़ात भी हुई थी, लेकिन यह सफ़र किस नवैयत का था और किसका माले तिजारत साथ था? इसकी कोई तफ़सील नहीं मिलती और न दूसरे असहाबे सैर ने इस सफ़र को अपना मौज़ू बनाया है। अल्लामा हुबली रह0 का इसके बारे में बयान हैः

"मेरी राय है कि इस सफ़र से मुराद वही सफ़र है, जिसमें हज़रत ख़दीजा के ग़ुलाम मीसरह साथ में थे। इसीलिए हुज़ूर अकरम स0अ0 का सफ़रे शाम दो बार से ज़्यादा साबित नहीं है।" (सीरतुल हुबलियाः 1/198)

कलीसा (Church) का शासन

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

कलीसा (Church) की दुनियाभर में फैली ताक़त व दबदबा और उसके बेपनाह रसूख तथा उसके परिणामस्वरूप प्रजा के हर वर्ग पर ज़ुल्म व अत्याचार की लम्बी दास्तान को समझने से पहले रोमन साम्राज्य के ऐतिहासिक व राजनीतिक परिदृश्य का संक्षिप्त विश्लेषण आवश्यक है।

रोमन साम्राज्य का अतीत चार भागों में बटा हुआ है:

1– रोमन गणतन्त्र, 2– रोमन साम्राज्य, 3– पूर्वी रोमन साम्राज्य, 4– पश्चिमी रोमन साम्राज्य

रोमन गणतन्त्र (Roman Republic):

रोमन सभ्यता व संस्कृति के प्रथम निर्माता एशिया माइनर के "इत्रस्की" (Etruscans) थे। उन्होंने उत्तरी इटली पर क़ब्ज़ा किया तथा उद्योग व व्यापार एवं सभ्यता व संस्कृति के मैदान में ख़ूब उन्नति की। शासन की सीमाओं को बढ़ाया और लगभग ढ़ाई सौ साल राज करने बाद 474 ई.पू. में वे गुमनामी के पर्दे में छिप गए। इस दौरान इटली की एक जमाअत ज़ज़ीर–ए–मनी के दक्षिणी भाग की नवआबादियों के उत्तर में आबाद हो गई। यह एक पवित्र पहाड़ के चारों ओर बारह कस्बों पर आधारित थे तथा यह लोग "लैटिन" कहलाते थे। उन नवआबादियों का एक समूह तिबर (Tiber) नदी के किनारे आबाद हुआ जहां ढलवान पहाड़ियां स्थित थीं, जो बहुत बड़ी तो नहीं थीं लेकिन रक्षा हेतु पर्याप्त थीं। इन नवआबादियों को पहले पहल व्यापारियों एवं शरणार्थियों ने आबाद किया था, बाद में यही आबादियां मिलकर "शहर–ए–रोम" बन गया।

शुरूआती समय में रोम पर बादशाहों या सरदारों का शासन था। बादशाह को अमन व जंग दोनों समय में बड़ा वर्चस्व प्राप्त था। वही सबसे बड़े धार्मिक पेशवा तथा न्यायकर्ता भी होता था। रोमियो ने इस इक़्तिदार का नाम "इम्पीरियम" रखा था। इससे यह समझा जाता था कि वह अमीरों को तलब करके उनसे मशवरा करेगा, तथा जनता की भलाई का ही निर्णय लेगा। उन अमीरों का एक समूह था जो "सीनेट" (Senate) कहलाता था। यदि बादशाह अपने अधिकारों का ग़लत इस्तेमाल करता तो यह समूह उसका विरोध करता। उन अमीरों के नीची प्रजा थी।

छठी सदी ई.पू. के अन्त में रोम पर बाहरी हमले हुए और एक क़बीलाई शासक जिसका संबंध "इत्रस्की" (Etruscans) से किया जाता है, रोम को बर्बाद कर दिया। लूटपाट एवं मारकाट से रोम की बुनियादें हिल गईं। अन्त में रोम निवासी इस विदेशी आक्रमण के ख़िलाफ़ उठ खड़े हुए तथा एक कठिन संघर्ष के बाद अपने शहर को स्वतन्त्र कराने में सफल हुए। इस तबाही व बर्बादी ने रोमन बादशाहत का ख़ात्मा कर दिया, परन्तु रोमियों ने अपने रूढ़िवादी स्वभाव के आधार पर शाही इक्तिदार–ए–आला अर्थात "इम्पीरियम" को बाक़ी रखा, अपितु उसे मज़बूत व सुदृढ़ करने हेतु उसमें कुछ बदलाव कर दिए। अतः बादशाह का सैन्य इक्तिदार दो जजों को दिया गया जो "काउन्सिल" कहलाते थे। धार्मिक पेशवाई का हिस्सा जो ख़ास बादशाह का था वह एक दूसरे ओहदेदार को दिया गया जो "क़ुर्बानियों का बादशाह" कहलाता था। इसके अतिरिक्त बादशाह के न्यायपालिका के अधिकारों "पैट्रों" को दिये गए। राज्य के इन सभी ओहदेदारों में सबसे महत्वपूर्ण काउन्सिल का पद था जिसकी अवधि केवल एक साल हुआ करती थी। उनकी नियुक्ति पूरी क़ौम की असेम्बली किया करती थी तथा काउन्सिल अपनी अवधि पूरी करने के बाद असेम्बली के आगे ज़िम्मेदार हुआ करती थी। इस प्रकार रोमियों ने "लोकतन्त्र" की आधारशिला रखी तथा अपनी स्थिरता एवं भविष्य की सफलता की ओर एक सकारात्मक क़दम बढ़ाया।

रोम की प्रजा परिश्रमी, मेहनती तथा स्वतन्त्र कृषक थी, लेकिन साथ ही साथ यह लोग अपने शहर की सेवा तथा उसकी सुरक्षा के लिए, सैन्य व्यवस्था के लिए भी तत्पर एवं कर्मठ थे तथा हर प्रकार की मुसीबत झेलने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। अतः तीसरी सदी ई.पू. तक यह छोटी सी हुकूमत इस हद तक सुदृढ़ हो चुकी थी कि वह इटली के बाहर बसने वाली क़ौमों से टक्कर लेने लगी।

कार्थेज (Carthage):

"कार्थेज" एक महान सामी सभ्यता थी जो उधोग व व्यापार में बेजोड़ थी। भूमध्य सागर (Mediterranean Sea) के किनारे पर जहां अब तिनस (Tinis) स्थित है, उसके महान शहर आबाद थे, जिसकी आबादी दस लाख से भी अधिक थी। रिवायतों के अनुसार शाम (वर्तमान सीरिया) के समुद्री किनारे पर बसने वाले फ़ोनीशियन (Phoenicians) लोगों ने इसको आबाद किया था।

"कार्थेज फ़ोनीशियन कनआनियों की एक कॉलोनी थी, यह अन्तिम तथा शायद सबसे पुरानी सामी हुकूमत थी जो पश्चिमी एशिया में स्थापित थी।" (द इम्पायर्स ऑफ़ द वर्ल्ड)

कार्थेज रोम का बहुत बड़ा दुश्मन था। उन दोनों के बीच 264 ई.पू. से 146 ई.पू. अर्थात एक सदी से अधिक समय तक युद्ध जारी रहा। यह युद्ध प्यूनिक वार्स (Punic Wars) कहलाता है। रोम के इतिहास का यह महत्वपूर्ण युद्ध कार्थेज की पूरी तरह से तबाही पर समाप्त हुआ, जिसके बाद रोमन साम्राज्य 'भूमध्य सागर' का सबसे बड़ा साम्राज्य बन गया। (रोम एंड कार्थेज)

रोम का फैलाव:

यूनान की सत्ता का जैसे–जैसे पतन होता गया, रोम उसकी जगह लेता गया। 202 ई.पू. में स्पेन को रोम का राज्य बनाया गया। 146 ई.पू. अफ़्रीक़ा का इलाक़ा साम्राज्य में शामिल किया गया। मक़दूनिया तथा यूनान भी इसी साल रोम के अधीन हो गए। एशिमा माइनर तथा दक्षिणी गॉल (Gaul) 118 ई.पू. में विजयी हुए। इसी साल शाम (सीरिया) भी जीता गया। 66 ई.पू. से लेकर 63 ई.पू. में आर्मेनिया में विजय हुई। 58 ई.पू. से लेकर 48 ई.पू. में जूलियस सीज़र (Julius Caesar) ने दक्षिणी गॉल (फ्रांस) को रोमन साम्राज्य का हिस्सा बनाया। इसके बाद आगस्टस (Augustus) ने मिस्र तथा डानुबे (Danube) नदी के क्षेत्रों को साम्राज्य में शामिल किया। आगस्टस के बाद जज़ाएरे बर्तानिया का इल्हाक़ हुआ जिसे क्लोडिअस (Claudius) ने 43 ई.पू. में जीता। फिर 99 ई. में बालाई इराक़ को भी रोमन साम्राज्य में शामिल कर लिया गया। इस प्रकार पहली शताब्दी के अन्त तक रोमन साम्राज्य दुनिया का महानतम साम्राज्य बन गया जो भूमध्य सागर जुड़े सभी क्षेत्रों पर आधारित था।

रोमन गणराज्य के इतिहास का बड़ा हिस्सा गृहयुद्ध एवं तबक़ाती कशमकश से भरा हुआ है। स्थिरता के लक्ष्य तक पहुंचने में उसे उतार–चढ़ाव के लम्बे सफ़र से गुज़रना पड़ा। आन्तरिक विद्रोहों को कुचलने तथा बाहरी दुश्मनों से निपटने में तत्पर रोमन बादशाहों ने महान कारनामे किए हैं। उन्हीं शासकों में पोम्पी (Pompey) तथा जोलियस सीज़र (Julius Caesar) को अत्यधिक ख्याति प्राप्त हुई। यह दोनों यद्यपि एक दूसरे के दुश्मन तथा आन्तरिक गृहयुद्धों के ज़िम्मेदार भी थे लेकिन साम्राज्य की सरहदों को दूर तक फैलाने में बेमिसाल जनरल साबित हुए।

जूलियस सीज़र अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त शहंशाह था। वह बेहतरीन सेनापति तथा बड़ी–बड़ी मुहिमों को जीतने वाला था। अपनी सभी योजनाओं तथा लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु वह अत्यधिक निरंकुश शासक था। अपने समकक्षो की तुलना में उसने अधिक ख्याति प्राप्त की थी। प्रजा उस पर पूरी तरह से मोहित थी। उनकी जन प्रिय होने का यह आलम था कि रोम के मन्दिर में उसकी मूर्ति लगी थी और उस पर लिखा था: "नाक़ाबिल–ए–तस्ख़ीर ख़ुदा के लिए।" जूलियस सीज़र का उद्देश्य रोम को एक महान तथा मज़बूत साम्राज्य बनाना था लेकिन इससे पहले कि वह अपनी योजनाओं को अन्तिम रूप दे सके उसके ख़िलाफ़ विद्रोह हुआ तथा वह मारा गया।

शेष: एक मर्द–ए–ख़ुदा की वसीयत

..... भी इसी ख़तरे से आगाह किया था कि अगर ग़ैरों में काम न हुआ तो वह दिन आने वाले हैं कि ज़िन्दगी तंग हो जाएगी। भारतीय मुसलमानों के सामने अब यही रास्ता है कि वह अपने अख़लाक़ से दिलों को जीतने की कोशिश करें और इस्लाम की अख़्लाक़ी व्यवस्था, ईमान की ताक़त तथा विश्वास के साथ देशवासियों के सामने पेश करें तथा हर आवश्यक व महत्वपूर्ण काम से पहले इसको अहम समझें कि यह हमारा व्यवहारिक कर्तव्य भी है, धार्मिक कर्तव्य भी है। यही हमारी सुरक्षा का मार्ग है और यही दीन की दावत का सबसे सुरक्षित, प्रभावित तथा ताक़तवर क़दम है।

सच बोलना

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और सच्चों के साथ रहो।" (सूरह तौबाः 15)

इस आयत में दो बातों का हुक्म दिया गया है। ख़ुदा का ख़ौफ़ और सच्चाई। यह दोनों सिफ़तें ऐसी हैं, जिस शख़्स में पैदा हो जाएं, वह इन्सानियत के कमाल को हासिल कर लेता है। और जो उन सिफ़तों से महरूम हैं, उनमें अदना दर्जे की इन्सानियत नहीं। उन सिफ़तों के पैदा होने से हर बदअख़लाक़ी, बेहयाई, बदकारी, धोखा, फ़रेब, ज़ुल्म, रिश्वत, चोरी, ग़रज़ कि हर गुनाह व ख़बासत से आदमी बच जाता है। दूसरों की निगाहों में तो अच्छा और माकूल होता ही है, अल्लाह व रसूल की निगाह में भी उसकी वक़अत होती है। उसका अंजाम बेहतर और आक़िबत ख़ैर होती है। मुबारक है वह दिल जिसमें ख़ुदा का ख़ौफ़ हो और मुबारक है वह ज़बान जो सच बोले।

रसूलुल्लाह (स0अ0) सच्चाई पर बहुत ज़्यादा ज़ोर देते और तवज्जो दिया करते थे और मिसालों के ज़रिये समझाया करते थे।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने फ़रमायाः

"सच नेकी की तरफ़ हिदायत करता है, और नेकी जन्नत की तरफ़ हिदायत करती है। आदमी सच बोलता है यहां तक कि अल्लाह तआला उसको अपने पास सच्चों में लिखता है, और झूठ गुनाहों पर आमादा करता है और गुनाह दोज़ख़ की तरफ़ ले जाते हैं। आदमी झूठ बोलता है, यहां तक कि अल्लाह तआला उसको झूठों में और लाग़ियों में लिख लेता है।" (बुख़ारी)

देखा आपने सच और झूठ का करिश्मा कि सच्ची ज़बान आदमी को किस बेहतर मक़ाम तक पहुंचा देती है और झूठी और मक्कार ज़बान किस तारीक और मुसीबत के घर पहुंचाती है।

सच इत्मिनान हैः

दूसरी जगह रसूलुल्लाह (स0अ0) का इरशाद है, हज़रत हुसन (रज़ि0) इब्ने अली (रज़ि0) रिवायत करते हैं कि मुझे रसूलुल्लाह (स0अ0) का फ़रमान याद हैः

"छोड़ दो जो तुमको शक में डाले, और उस चीज़ को अख़्तियार करो जिससे तुम्हारे दिल में खटक न पैदा हो, पस बेशक सच इत्मिनान है, और झूठ शक है।" (तिरमिज़ी)

और आगे सुनिये, जिस तरह साफ़ व पाक, दूध या पानी को एक क़तरा गन्दगी गन्दा कर देती है और वह क़ीमती दूध या पाक पानी, नापाक हो जाता है। इसी तरह थोड़ा सा झूठ सच को ग़ैर माकूल बना देता है।

इसलिए हर मुसलमान पर लाज़िम है कि अपनी ज़बान को सच बोलने से और बोलते रहने से पाक तरह बनाए रखिये और ज़िन्दगी भर इधर तवज्जे रखे कि किसी वक़्त भी झूठ न बोले, चाहे मज़ाक़ में हो या किसी के दबाव में, लालच में हो या ओहदा हासिल करने के शौक़ में, सच सच है। चाहे जब भी या किसी भी मौक़े पर बोला जाए। झूठ झूठ है, चाहे किसी काम में बोला जाए। हां कुछ मौक़े ऐसे हैं, जिनमें इजाज़त दी गई है, उनको मालूम करना भी ज़रूरी है, ताकि मौक़ा और मौक़े की पहचान का इल्म हो जाए।

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह0

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP-55/2017 -19

Issue: 09 SEPTEMBER 2019 VOLUME: 11

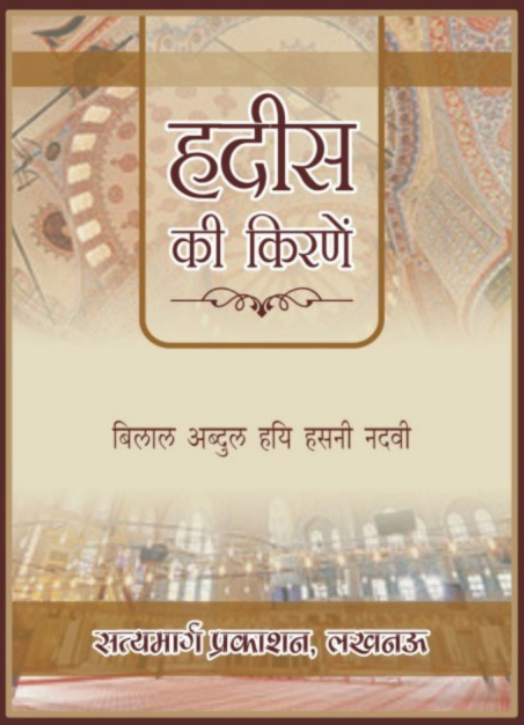

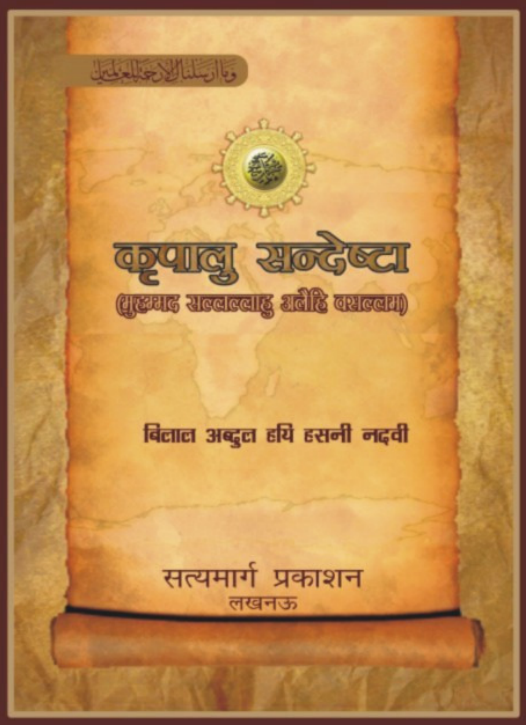

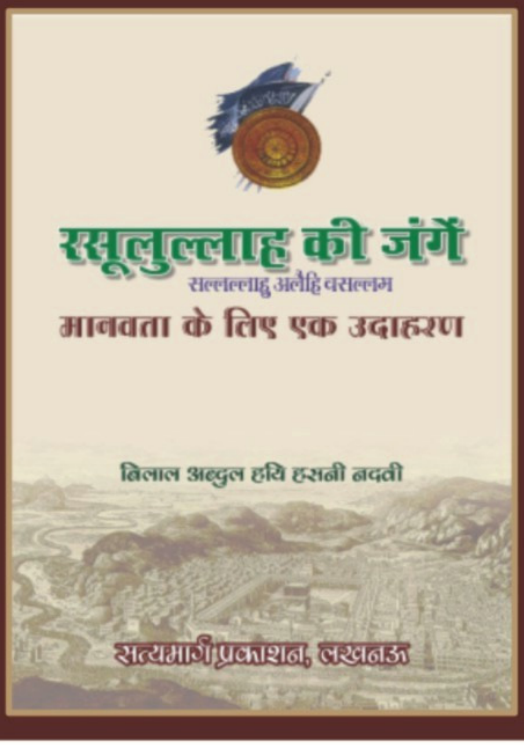

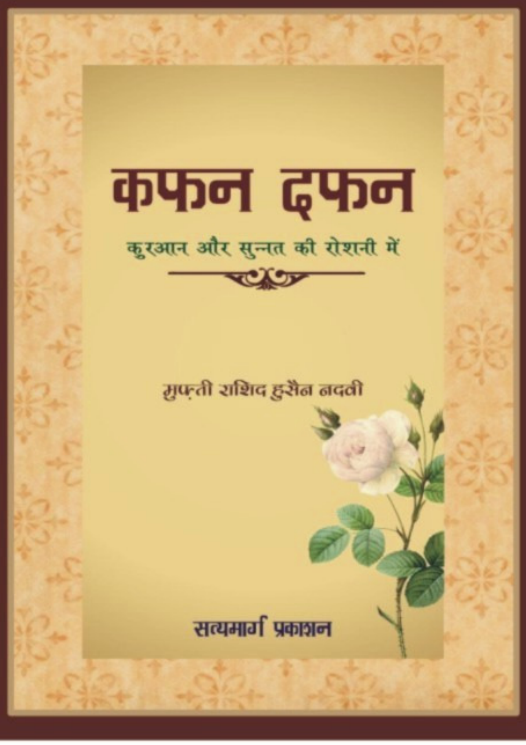

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.